सहजानंद शास्त्रमाला

द्रव्य संग्रह द्वितीय अधिकार

रचयिता

गाथा 15-27

अध्यात्मयोगी, न्यायतीर्थ, सिद्धान्तन्यायसाहित्यशास्त्री

पूज्य श्री क्षु० मनोहरजी वर्णी ''सहजानन्द'' महाराज

प्रकाशक

श्री माणकचंद हीरालाल दिगम्बर जैन पारमार्थिक न्यास गांधीनगर, इन्दौर

Online Version : 001

प्रकाशकीय

श्री सहजानन्द शास्त्रमाला सदर मेरठ द्वारा पूज्यवर्णीजी के साहित्य प्रकाशन का गुरूतर कार्य किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक **'द्रव्य संग्रह द्वितीय अधिकार'** अध्यात्मयोगी न्यायतीर्थ पूज्य श्रीमनोहरजी वर्णी की सरल शब्दों व व्यवहारिक शैली में रचित पुस्तक है एवं सामान्य श्रोता/पाठक को शीघ्र ग्राह्य हो जाती है।

ये ग्रन्थ भविष्य में सदैव उपलब्ध रहें व नई पीढ़ी आधुनिकतम तकनीक (कम्प्यूटर आदि) के माध्यम से इसे पढ़ व समझ सके इस हेतु उक्त ग्रन्थ सहित पूज्य वर्णीजी के अन्य ग्रन्थों को http://www.sahjanandvarnishastra.org/ वेबसाइड पर रखा गया है। यदि कोई महानुभाव इस ग्रन्थको पुन: प्रकाशित कराना चाहता है, तो वह यह कंप्यूटर कॉपी प्राप्त करने हेतु संपर्क करे । इसी ग्रन्थ की PDF फाइल www.jainkosh.org पर प्राप्त की जा सकती है।

इस कार्य को सम्पादित करने में **श्री माणकचंद हीरालाल दिगम्बर जैन पारमार्थिक न्यास गांधीनगर** इन्दौर का पूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है। ग्रन्थ के टंकण कार्य में **श्रीमती मनोरमाजी, गांधीनगर** एवं प्रूफिंग करने हेतु श्री **सुरेशजी पांड्या, इन्दौर** का सहयोग रहा है — हम इनके आभारी हैं।

सुधीजन इसे पढ़कर इसमें यदि कोई अशुद्धि रह गई हो तो हमें सूचित करे ताकि अगले संस्करण (वर्जन) में त्रुटि का परिमार्जन किया जा सके।

विनीत

विकास छाबड़ा

53, मल्हारगंज मेनरोड़

इन्दौर (म०प्र०)

Phone:94066-82889

Email-vikasnd@gmail.com

www.jainkosh.org

Contents

द्वितीय अधिकार 4
गाथा १५ 4
गाथा १६ 8
गाथा १७ 14
गाथा १८ 17
गाथा १९ 19
गाथा २० 21
गाथा २१ 23
गाथा २२ 26
गाथा २३ 28
गाथा २४ 30
गाथा २५ 33
गाथा २६ 35
गाथा २७ 37

द्वितीय अधिकार

गाथा १५

अज्जीवो पुणणेओ पुग्गल धम्मो अधम्म आयासं ।
कालो पुग्गल मुत्तो रूवादिगुणो अमुत्ति सेसादु ।।१५।।

अन्वय—पुणापुग्गल धम्मो अधम्म आयासं कालो अज्जीवोणेवो पुग्गल रुवादिगुणो मुत्तो दुसेसा अमुत्ति ।

अर्थ—और फिर पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और कालद्रव्य—इन पाँचों को अजीव जानना चाहिये । उनमें से पुद्गलद्रव्य तो रूपादि गुण वाला है, इसलिये मूर्तिक है और शेष के धर्म, अधर्म, आकाश और काल—ये चार द्रव्य अमूर्तिक हैं ।

प्रश्न १—परम उपादेय शुद्ध जीवद्रव्य के वर्णन के बाद अजीवों के वर्णन का क्या प्रयोजन है?

उत्तर—जीवतत्त्व उपादेय है और अजीवतत्त्व हेय है । हेयतत्त्व को जाने बिना उसे कैसे छोड़ा जाये और अजीवतत्त्व छोड़े बिना जीवतत्त्व कैसे उपादेय बनेगा? इस कारण अजीवतत्त्व का वर्णन किया ।

प्रश्न २—तब तो अजीवतत्त्व का पहिले वर्णन करना था?

उत्तर—जीवतत्त्व प्रधान है, इसलिये जीवतत्त्व का पहिले वर्णन किया अथवा अजीव उसे कहते हैं, जो जीव नहीं । सो अजीव का स्वरूप जानने के लिए जीव के स्वरूप का वर्णन पहिले आवश्यक ही है ।

प्रश्न ३—अजीव किसे कहते हैं?

उत्तर—जिसमें जीवत्व अर्थात् चेतना न हो उसे अजीव कहते हैं । इन अजीव द्रव्यों में किसी भी प्रकार की चेतना नहीं है ।

प्रश्न ४—चेतना कितने प्रकार की होती है?

उत्तर—चेतनाशक्ति की अपेक्षा तो एक ही प्रकार की है, विकास की अपेक्षा तीन प्रकार की है—(१) कर्मफलचेतना, (२) कर्मचेतना और (३) ज्ञानचेतना ।

प्रश्न ५—कर्मफलचेतना किसे कहते हैं?

उत्तर—ज्ञान के अतिरिक्त अन्य भावों में व पदार्थों में मैं इसे भोगता हूँ, ऐसा संवेदन करना कर्मफलचेतना है । इसमें अव्यक्त सुखदुःख का अनुभव भी अन्तर्निहित है ।

प्रश्न ६—कर्मफलचेतना किन जीवों के होती है?

उत्तर—कर्मफलचेतना एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञीपञ्चेन्द्रिय में होती है और संज्ञीपञ्चेन्द्रिय में तीसरे गुणस्थान तक के संज्ञीपञ्चेन्द्रिय जीवों में होती है । इसके आगे १२वें गुणस्थान तक गौणरूप से माना है ।

प्रश्न ७—कर्मचेतना किसे कहते है?

उत्तर—ज्ञान के अतिरिक्त अन्य भावों में व पदार्थों मैं मैं इसे करता हूँ, ऐसा संवेदन करना कर्मचेतना है।

प्रश्न ८—कर्मचेतना किन जीवों के होती है?

उत्तर—कर्मचेतना द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पञ्चेन्द्रिय में व तीसरे गुणस्थान तक संज्ञी पञ्चेन्द्रियों में कर्मचेतना होती है । एकेन्द्रिय जीवों में क्रिया की मुख्यता न होने से कर्मचेतना गौणरूप से कहीं है चौथे गुणस्थान से १२वें गुणस्थान तक के जीवों में अंशमात्र भी विपरीत श्रद्धान न होने से मात्र रागद्वेष परिणति के कारण कर्मचेतना गौणरूप से मानी है ।

प्रश्न ९—ज्ञानचेतना किसे कहते हैं?

उत्तर—अपने को शुद्धज्ञानमात्र संचेतन करना ज्ञानचेतना है ।

प्रश्न १०—ज्ञानचेतना किनके होती है?

उत्तर—ज्ञानचेतना चौथे गुणस्थान से लेकर १४वें गुणस्थान तक के सब जीवों में और सिद्धों में होती है । १३वें, १४वें गुणस्थानवर्ती जीवों के व सिद्धों के ज्ञानोपयोग का पूर्ण शुद्ध परिणमन होने से मुख्यरूप से ज्ञानचेतना है ।

प्रश्न ११—पुद्गल किसे कहते हैं?

उत्तर—जिसमें पूरन और गलन का स्वभाव हो उसे पुद्गल कहते हैं । अनेक परमाणुवों का मिलकर स्कन्ध हो जाना और बिखरकर खण्ड-खण्ड हो जाना वह बात पुद्गल में ही पाई जाती है ।

प्रश्न १२—एक पुद्गल पदार्थ बिखर क्यों जाता है?

उत्तर—जो स्कंध है वह एक पुद्गल पदार्थ नहीं है । उसमें जो एक-एक करके अनेक परमाणु हैं जिनका कि दूसरा खण्ड कभी नहीं हो सकता, ऐसे अखण्ड और सूक्ष्म हैं वे एक-एक पुद्गल द्रव्य हैं ।

प्रश्न १३—स्कन्ध क्या द्रव्य नहीं है?

उत्तर—स्कन्ध समानजातीय द्रव्यपर्याय है अर्थात् पुद्गल द्रव्यजाति के ही अनेक परमाणुवों का व्यञ्जनपर्याय है । निश्चयनय से वहाँ भी जितने परमाणु हैं उतने ही उनके अपने-अपने में परिणमन हैं ।

प्रश्न १४—पुद्गल कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर—संक्षेप से तो पुद्गल २ प्रकार के होते हैं—(१) अणु याने परमाणु और (२) स्कन्ध ।

प्रश्न १५—विस्तार से पुद्गल कितने प्रकार के कहे गये हैं?

उत्तर—न संक्षेप न अतिविस्तार से पुद्गल २३ प्रकार के कहे गये हैं—(१) अणु, (२) संख्याताणुवर्गणा, (३) असंख्याताणुवर्गणा, (४) अनन्ताणुवर्गणा, (५) ग्राह्याहारवर्गणा, (६) ग्राह्यभाषावर्गणा, (७) ग्राह्यमनोवर्गणा, (८) ग्राहतैजसवर्गणा, (९) कार्माणवर्गणा, (१०) अग्राह्याहारवर्गणा, (११) अग्राह्यभाषावर्गणा, (१२) अग्राह्यमनोवर्गणा, (१३) अग्राह्यतैजसवर्गणा, (१४) ध्रुववर्गणा, (१५) सान्तरनिरन्तरवर्गणा, (१६) सान्तरनिरन्तरशून्यवर्गणा, (१७) प्रत्येकशरीरवर्गणा, (१८) ध्रुवशून्यवर्गणा, (१९) वादरनिगोदवर्गणा, (२०) वादरनिगोदशून्यवर्गणा, (२१) सूक्ष्मनिगोदवर्गणा, (२२) नभोवर्गणा, (२३) महास्कन्धवर्गणा ।

प्रश्न १६—इन २३ प्रकार के पुद्गलों का संक्षिप्त विभाग क्या है?

उत्तर—इनमें अणु तो शुद्ध पुद्गल द्रव्य है शेष के २२ स्कन्ध हैं । उन बाईस स्कन्धों में संख्याताणुवर्गणा असंख्याताणुवर्गणा व अनन्ताणुवर्गणायें ३ सामान्य हैं, संख्या की अपेक्षा से हैं । ग्राह्याहारवर्गणा, ग्राह्यभाषावर्गणा, ग्राह्यमनोवर्गणा, ग्राह्यतैजसवर्गणा और कार्माणवर्गणा ये ५ जीव द्वारा ग्राह्य हैं? शेष के १४ को उनके

नाम पर से उनका प्रयोजन जान लेना चाहिये ।

प्रश्न १७—धर्मद्रव्य का क्या स्वरूप है?

उत्तर—धर्मद्रव्य आदि शेष ४ अजीव द्रव्यों का स्वरूप अलग से गाथावों में आगे कहा जावेगा इस कारण वहाँ ही इस सबका विवरण होगा ।

प्रश्न १८—इन सब द्रव्यों का आकार क्या है?

उत्तर—इन द्रव्यों का आकार अपने-अपने प्रदेशोंरूप है । मूर्त आकार केवल पुद्गलद्रव्य का ही है ।

प्रश्न १९—पुद्गलद्रव्य मूर्त क्यों है?

उत्तर—पुद्गल में रूप रस, गन्ध और स्पर्श ये चार गुण और इनके परिणमन पाये जाते हैं, इसलिये पुद्गलद्रव्य मूर्त है । रूप, रस, गन्ध और स्पर्श इन चारों के एकत्व को मूर्ति कहते हैं ।

प्रश्न २०—धर्म, अधर्म, आकाश और काल अमूर्त क्यों हैं?

उत्तर—धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये चारों द्रव्य रूप, रस, गन्ध और स्पर्श से रहित हैं अत: ये अमूर्त हैं ।

प्रश्न २१—परमाणु का स्कन्ध से बन्ध क्यों हो जाता है?

उत्तर—एक परमाणु का स्कन्ध से बन्ध नहीं होता किन्तु स्कन्ध का स्कन्ध के साथ विशिष्ट सम्बन्ध हो जाता है ।

प्रश्न २२—परमाणु का परमाणु से बन्ध क्यों हो जाता है?

उत्तर—परमाणु का परमाणु के साथ स्निग्धरूक्षगुण के परिणमन के कारण बन्ध हो जाता है । दो अधिक अविभाग प्रतिच्छेद (डिग्री) वाले स्निग्ध या रूक्ष परमाणु के साथ उससे २ कम अविभाग प्रतिच्छेद वाले स्निग्ध या रूक्ष किसी भी परमाणु का बन्ध हो जाता है । किन्तु एक अविभाग प्रतिच्छेद वाले स्निग्ध या रूक्ष किसी भी परमाणु का बन्ध नहीं होता । जैसे कि जघन्य राग वाले मुनि के राग का बन्ध नहीं होता ।

प्रश्न २३—परमाणु शुद्ध होते या अशुद्ध?

उत्तर—परमाणु केवल एक द्रव्य रह गया इस अपेक्षा से तो परमाण शुद्ध है । जिस परमाणु का बन्धन हो ऐसी शुद्धता की अपेक्षा जघन्य अर्थात् एक अविभाग प्रतिच्छेद मात्र स्निग्ध, रूक्षपरमाणु शुद्ध है अनेक अविभाग प्रतिच्छेद वाला स्निग्ध, रूक्षपरमाणु अशुद्ध है ।

प्रश्न २४—जघन्य गुण वाले परमाणु का फिर कभी बन्ध होता है या नहीं?

उत्तर—जघन्यगुण वाले परमाणु में जब स्वयं अविभागप्रतिच्छेद की वृद्धि हो जाती है तब बन्ध योग्य होता है ।

प्रश्न २५—दो परमाणुवों का बन्ध होने पर वे किसरूप परिणम जाते हैं?

उत्तर—कम गुण वाला परमाणु अधिक गुण वाले परमाणु की तरह परिणम जाता है । जैसे १५ डिग्री के रूक्षपरमाणु का १७ डिग्री के स्निग्धपरमाणु के साथ बन्ध हुआ दो रूक्षपरमाणु भी स्निग्धपरमाणु के बन्ध का निमित्त पाकर रूक्षपरिणमन का व्यय करता हुआ स्निग्धगुण रूप परिणम जाता है ।

प्रश्न २६—इस वर्णन से हमें क्या ध्यान करना चाहिये?

उत्तर—जैसे जघन्य गुण वाला स्निग्धत्व या रूक्षत्वपरमाणु के बन्ध के लिये समर्थ नहीं होता उसी प्रकार जघन्य गुण वाला राग जीव के बन्ध के लिये समर्थ नहीं होता और उस राग के नष्ट होते ही अनन्तचतुष्टय की शुद्धता हो जाती है । यह सब निज शुद्धात्म भावना का फल है । अत: रागरहित निजशुद्ध चैतन्यस्वभाव की उपासना करना चाहिये ।

अब पुद्गलद्रव्य की द्रव्यपर्यायों का वर्णन करते हैं—

गाथा १६

सद्दो बंधो सुहुमो थूलो संठाण भेद तम छाया ।
उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया ।।१६।।

अन्वय—सद्दो, बंधो, सुहमो, थूलो, संठाण, भेदतमछाया, उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया ।

अर्थ-—शब्द, बन्ध, सूक्ष्म, स्थूल, संस्थान, भेद, अन्धकार, छाया, उद्योत, आताप ये अथवा इन सहित पुद्गलद्रव्य के पर्याय हैं ।

प्रश्न १—पर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर-—गुणों की अवस्थाओं को पर्याय कहते हैं ।

प्रश्न २—पर्याय कितने प्रकार के होते है?

उत्तर—पर्याय दो प्रकार के होते है—(१) अर्थपर्याय, (२) व्यञ्जनपर्याय ।

प्रश्न ३—अर्थपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर—अगुरुलघु गुण के निमित्त से द्रव्य में होने वाली षड्गुण हानिवृद्धिरूप, (अनंत भाग वृद्धि, असंख्यात भाग वृद्धि, संख्यात भाग वृद्धि, संख्यात गुण बुद्धि, असंख्यात गुण वृद्धि, अनन्त गुण वृद्धि, अनन्त भाग हानि, असंख्यात भाग हानि, संख्यात भाग हानि, संख्यात गुण हानि, असंख्यात गुण हानि, अनन्त गुण हानिरूप) अन्त: परिणमन को अर्थपर्याय कहते हैं । यह अर्थपर्याय सूक्ष्म है व वचन के अगोचर है ।

प्रश्न ४—व्यञ्जनपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर-—गुणों की व्यक्त अवस्था को व्यञ्जनपर्याय कहते हैं ।

प्रश्न ५—व्यञ्जनपर्याय के कितने भेद हैं?

उत्तर—व्यञ्जनपर्याय के २ भेद हैं—(१) गुणव्यंजन पर्याय, (२) द्रव्यव्यंजन पर्याय ।

प्रश्न ६—अर्थपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर—वस्तु के प्रदेशवत्त्वगुण के अतिरिक्त अन्य समस्त गुणों के परिणमन को अर्थपर्याय कहते हैं ।

प्रश्न ७—गुणव्यंजन पर्याय के कितने भेद हैं?

उत्तर—गुणव्यंजन पर्याय के २ भेद हैं—(१) स्वभाव गुणव्यंजन पर्याय, (२) विभाव गुणव्यंजन पर्याय ।

प्रश्न ८—स्वभाव गुणव्यंजन पर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर—परनिमित्त या संयोग के बिना गुणों के शुद्ध परिणमन को स्वभाव व्यंजनपर्याय कहते हैं । शुद्ध परिणमन सम व एक स्वरूप होता है ।

प्रश्न ९—विभाव गुणव्यंजन पर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर—परसंयोग व निमित्त को पाकर होने वाले गुणों के विकृत परिणमन को विभाव गुणव्यंजनपर्याय कहते हैं । विभाव परिणमन विषम व नाना प्रकार का होता है ।

प्रश्न १०—द्रव्यव्यञ्जन पर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर—प्रदेशवत्त्व गुण के परिणमन व अनेक द्रव्यों के संयोग से होने वाले प्रदेश परिणमन को द्रव्यव्यञ्जन पर्याय कहते हैं ।

प्रश्न ११—द्रव्यव्यञ्जन पर्याय के कितने भेद हैं?

उत्तर—द्रव्यव्यञ्जन पर्याय के २ भेद हैं—(१) स्वभाव द्रव्यव्यञ्जन पर्याय, (२) विभाव द्रव्यव्यंजन पर्याय ।

प्रश्न १२—स्वभाव द्रव्यव्यञ्जन पर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर—परद्रव्य के सम्बन्ध से रहित केवल एक ही द्रव्य के प्रदेशपरिणमन को स्वभाव द्रव्यव्यञ्जन पर्याय कहते हैं ।

प्रश्न १३—विभाव द्रव्यव्यञ्जन पर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर—परद्रव्य के निमित्त से व सम्बन्ध सहित प्रदेशों के परिणमन को विभाव द्रव्यव्यञ्जन पर्याय कहते हैं ।

प्रश्न १४—पुद्गलद्रव्य में गुणव्यंजनपर्याय क्या-क्या होते है?

उत्तर—पाँच प्रकार का रूप, पाँच प्रकार का रस, दो प्रकार का गंध, ४ प्रकार का स्पर्श ये पुद्गल द्रव्य की गुणव्यञ्जन पर्याय हैं ।

प्रश्न १५-—कौन से चार प्रकार का स्पर्श गुणव्यञ्जन पर्याय नहीं है?

उत्तर-—गुरु, लघु, कोमल, कठोर, ये चार गुणव्यञ्जन पर्याय नहीं किन्तु द्रव्यपर्याय हैं ।

प्रश्न १६—गुरु, लघु, कोमल, कठोर ये चार व्यञ्जनपर्याय क्यों नहीं?

उत्तर—यदि ये गुणव्यञ्जन पर्याय होती तो परमाणु अवस्था में ये रहना चाहिये थे, किन्तु परमाणु में ये चार स्पर्श होते नहीं है अत: स्कंध के याने द्रव्यव्यञ्जन पर्याय के साथ इनका सम्बंध होने से ये द्रव्यपर्याय ही हैं ।

प्रश्न १७—इस गाथा में कहे गये पर्याय कौन से पर्याय हैं?

उत्तर—ये सब विभाव द्रव्यव्यञ्जन पर्याय हैं ।

प्रश्न १८—शब्द किसे कहते है?

उत्तर—भाषावर्गणा के स्कन्धों के संयोग वियोग के कारण जो ध्वनिरूप परिणमन है उसे शब्द कहते हैं ।

प्रश्न १९—शब्द कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर—शब्द दो प्रकार के होते हैं-—(१) भाषात्मक और (२) अभाषात्मक ।

प्रश्न २०—भाषात्मक शब्द किसे कहते हैं?

उत्तर—त्रसजीवों के योग के कारण होने वाली ध्वनि को भाषात्मक शब्द कहते हैं ।

प्रश्न २१—भाषात्मक शब्द कितने प्रकार के हैं?

उत्तर—भाषात्मक शब्द दो प्रकार के हैं-—(१) अक्षरात्मक और (२) अनक्षरात्मक ।

प्रश्न २२—अक्षरात्मक भाषा कितने प्रकार की होती है?

उत्तर—संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, मागधी, पाली, हिन्दी, उर्दू, इंगलिश, जर्मनी, फ्रान्स, बंगाली, गुजराती, तेलुगु, कनाड़ी, मद्रासी, पंजाबी, अरबी और मराठी आदि अनेक प्रकार की अक्षरात्मक भाषा होती है । यह आर्य म्लेच्छ मनुष्य आदि के होती है । इस भाषा से व्यवहार की प्रवृत्ति होती है ।

प्रश्न २३—अनक्षरात्मक भाषा किनके होती है?

उत्तर—द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञीपञ्चेन्द्रिय व संज्ञीपञ्चेन्द्रिय तिर्यंचों के अनक्षरात्मक भाषा होती है । सर्वज्ञदेव की दिव्यध्वनि भी अनक्षरात्मक भाषा कहलाती है ।

प्रश्न २४—ये भाषात्मक शब्द तो जीवों के शब्द हैं इनको पुद्गल द्रव्य की पर्याय क्यों कहा?

उत्तर—-यद्यपि भाषात्मक शब्द की उत्पत्ति जीव के संयोग से है, जीव ने जो पहिले शब्दादि पञ्चेन्द्रिय विषयों के रागवश सुस्वर या दुःस्वर प्रकृति का बन्ध किया था उसके उदय के निमित्त से है, तथापि निश्चय से भाषावर्गणा नामक पुद्गल स्कन्ध के ही परिणमन हैं, अत: भाषात्मक शब्द पुद्गल द्रव्य के पर्याय कहे गये हैं ।

प्रश्न २५—इन शब्दों के वर्तमान पर्याय के समय जीव किस प्रकार निमित्त होता है?

उत्तर—जीव के इच्छा उत्पन्न होती है कि मैं इस प्रकार बोलूं । इच्छा के निमित्त से आत्मा के प्रदेशों का योग होता है । उस योग के निमित्त से एकक्षेत्रावगाह स्थित शरीर का वात (वायु) चलता है । शरीरवायु चलने के निमित्त से औंठ, जिह्वा, कण्ठ, ताल का तदनुरूप हलन चलन होता है उसके निमित्त से भाषावर्गणा का शब्दरूप परिणमन होता है ।

प्रश्न २६—दिव्यध्वनि के शब्द में आत्मा किस प्रकार निमित्त होता है?

उत्तर—पूर्वकाल में सम्यग्दृष्टि आत्मा ने जगत के जीवों के प्रति परमकरुणारूप भाव किये इनका मोह किसी प्रकार छूटे सुमार्ग पर लग जावे आदि इस प्रकार की भावना से जो विशिष्ट पुण्यप्रकृति एवं सुस्वर प्रकृति का बंध किया उसके उदय को निमित्त पाकर, भव्यजीवों के पुण्योदय होने पर, योग के निमित्त से अर्हंत परमेष्ठी के सर्वाङ्ग से भाषावर्गणावों का अनक्षरात्मक भाषारूप परिणमन होता है ।

प्रश्न २७—अभाषात्मक शब्द कितने प्रकार के हैं?

उत्तर—अभाषात्मक शब्द २ प्रकार के है—(१) प्रायोगिक, (२) वैस्रसिक ।

प्रश्न २८—प्रायोगिक शब्द किसे कहते हैं?

उत्तर—यथा योग्य दो पौद्गलिक स्कंधों के प्रयोग सम्बन्ध होने पर जो शब्द उत्पन्न होते हैं उन्हें प्रायोगिक शब्द कहते हैं ।

प्रश्न २९—प्रायोगिक शब्द कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर—प्रायोगिक शब्द चार प्रकार के होते है—(१) तत, (२) वितत, (३) घन और (४) सुषिर ।

प्रश्न ३०—तत शब्द किसे कहते है?

उत्तर—वीणा, सितार आदि के तारों से उत्पन्न होने वाले शब्द को तत शब्द कहते हैं ।

प्रश्न ३१—वितत शब्द किसे कहते हैं?

उत्तर—ढोल, नगाड़े आदि के चर्म से उत्पन्न होने वाले शब्द को वितत शब्द कहते हैं ।

प्रश्न ३२—धन शब्द किसे कहते हैं?

उत्तर—काँसे के घण्टे आदि के प्रयोग से उत्पन्न होने वाले शब्द को घन शब्द कहते हैं ।

प्रश्न ३३—सुषिर शब्द किसे कहते हैं?

उत्तर—बंशी, तुरी आदि को फूककर बनाने से उत्पन्न हुए शब्द को सुषिर शब्द कहते हैं ।

प्रश्न ३४—मनुष्यादि के व्यापार से उत्पन्न होने वाले इन शब्दों को केवल पुद्गल के पर्याय क्यों कहे जा रहे हैं?

उत्तर—मनुष्यादि का व्यापार तो प्रकट जुदा है, निमित्तमात्र है । उक्त सभी शब्द केवल पुद्गल के ही पर्याय हैं ।

प्रश्न ३५—वैस्रसिक शब्द किसे कहते हैं?

उत्तर—विस्रसा अर्थात् स्वभाव से याने किसी दूसरे के प्रयोग बिना जो शब्द उत्पन्न होते हैं उन्हें वैस्रसिक शब्द कहते हैं । जैसे मेघ गर्जना के शब्द आदि ।

प्रश्न ३६—बन्ध किसे कहते हैं?

उत्तर—दो या अनेक पदार्थों के परस्पर बन्ध हो जाने को बन्ध कहते हैं । जो स्कन्ध दिखते हैं उनमें बन्ध पर्याय है वह पौद्गलिक बन्ध है । कर्म और शरीर का बन्ध भी पौद्गलिक है ।

प्रश्न ३७—सूक्ष्म किसे कहते हैं?

उत्तर—अल्पपरिमाण को सूक्ष्म कहते हैं । यह सूक्ष्म दो प्रकार का होता है—(१) साक्षात् सूक्ष्म और (२) अपेक्षाकृत सूक्ष्म ।

प्रश्न ३८—साक्षात् सूक्ष्म किसे कहते हैं?

उत्तर—जिससे सूक्ष्म अन्य कोई न हो अर्थात् जिसकी सूक्ष्मता किसी की अपेक्षा रखकर न बनी हो । जैसे—परमाणु ।

प्रश्न ३८—अपेक्षाकृत सूक्ष्म किसे कहते हैं?

उत्तर—जो सूक्ष्मता किसी की अपेक्षा रखकर प्रतीत हो । जैसे आम से आंवला सूक्ष्म है ।

प्रश्न ४०—स्थूल किसे कहते हैं?

उत्तर—बड़े परिमाण वाले को स्थूल कहते हैं । यह भी २ प्रकार का है—(१) उत्कृष्ट स्थूल और (२) अपेक्षाकृत स्थूल ।

प्रश्न ४१—उत्कृष्ट स्थूल कौन है?

उत्तर—समस्त लोकरूप महास्कन्ध सर्वोत्कृष्ट स्थूल है ।

प्रश्न ४२—अपेक्षाकृत स्थूल किसे कहते हैं?

उत्तर—जो स्थूलता किसी की अपेक्षा रखकर प्रतीत हो । जैसे आवले से आम स्थूल है ।

प्रश्न ४३—सूक्ष्म और स्थूल पुद्गल द्रव्य विभाव व्यञ्जनपर्याय क्यों माने गये?

उत्तर—सूक्ष्म और स्थूल पुद्गल द्रव्य के किसी गुण के परिणमन नहीं है, किन्तु अनेक प्रदेशों (परमाणुवों) के सम्बन्ध से व उनके वियोग से सूक्ष्मता स्थूलता होती है, अतएव ये विभावव्यंजन पर्याय हैं ।

प्रश्न ४४—संस्थान किसे कहते हैं?

उत्तर—मूर्त पदार्थ के आकार को संस्थान कहते हैं । समचतुरस्रसंस्थान, न्यग्रोधसंस्थान, स्वातिसंस्थान,

कुब्जकसंस्थान, वामनसंस्थान, हुंडकसंस्थान—ये भी पुद्गलद्रव्य की विभावव्यंजन पर्याय हैं और शरीर के अतिरिक्त गोल त्रिकोण आदि अन्य स्कन्धों के संस्थान भी पुद्गल द्रव्य के विभावव्यंजन पर्याय हैं तथा अन्य अव्यक्त संस्थान भी पुद्गल के विभावव्यंजनपर्यायें हैं ।

प्रश्न ४५—समचतुरस्रादि संस्थान तो जीव के हैं उन्हें पुद्गल का कैसे कहते?

उत्तर—ये संस्थान शरीर के आकार हैं शरीर पौद्गलिक है चैतन्यभाव से भिन्न हैं इसलिये वे भी वास्तव में पुद्गल के विभावव्यञ्जन पर्याय हैं ।

प्रश्न ४६—भेद किसे कहते हैं?

उत्तर—संयुक्त पदार्थ के खण्ड होने को भेद कहते हैं ।

प्रश्न ४७—भेद कितने प्रकार का होता हैं?

उत्तर—घनखण्ड, द्रवखण्ड आदि अनेक प्रकार का भेद होता है । जैसे गेहूं का चूर्ण, घी का हिस्सा आदि ।

प्रश्न ४८—तम किसे कहते हैं?

उत्तर—देखने में बाधा डालने वाले अन्धकार को तम कहते हैं ।

प्रश्न ४९—तम तो प्रकाश के अभाव को कहते हैं, वह पुद्गल पर्याय कैसे हैं?

उत्तर—प्रकाश को अन्धकार का अभाव बताकर प्रकाश का भी तो लोप किया जा सकता । दृष्टि का साधक और रोधक होने से एक को सद्भावरूप और एक को अभावरूप कहना ठीक नहीं । दोनों ही सद्भावरूप हैं । जैसे प्रकाश स्कन्ध के प्रदेशों की अवस्था है वैसे अन्धकार भी स्कन्ध के प्रदेशों की अवस्था है ।

प्रश्न ५०—छाया किसे कहते हैं?

उत्तर—किसी पदार्थ के निमित्त से प्रकाशयुक्त अथवा स्कन्ध पदार्थ पर प्रतिबिम्ब होने को छाया कहते हैं । जैसे वृक्ष की पृथ्वी पर छाया, दर्पण में मनुष्य का प्रतिबिम्ब जल में चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब आदि ।

प्रश्न ५१—ये प्रतिबिम्ब वृक्ष, मनुष्य और चन्द्र के हैं, अत: उन्हीं के पर्याय होना चाहिये?

उत्तर-—वृक्ष, मनुष्य, चन्द्र तो निमित्तमात्र हैं, ये प्रतिबिम्ब तो पृथ्वी दर्पण जल के पर्याय हैं, क्योंकि जो जिसके प्रदेश में परिणमता है वह उसकी ही पर्याय होती है ।

प्रश्न ५२—उद्योत किसे कहते हैं?

उत्तर—अधिक उजाला उत्पन्न नहीं करने वाले विशिष्ट प्रकाश को उद्योत कहते हैं ।

प्रश्न ५३—यह उद्योत किन पदार्थों में होता है?

उत्तर—चन्द्रविमान में, विशिष्ट रत्नों में जुगुनू आदि तिर्यंच जीवों के शरीर में उद्योत होता है । यह उद्योत भी रूप, रस, गन्ध और स्पर्श गुण का परिणमन नहीं है किन्तु पुद्गलद्रव्य की द्रव्यपर्याय हैं ।

प्रश्न ५४—आतप किसे कहते हैं?

उत्तर-—जो मूल में तो शीतल हो, किन्तु अन्य पदार्थों के उष्णता उत्पन्न होने में निमित्त हो उसे आतप कहते हैं ।

प्रश्न ५५—आतप किन पदार्थों में होता है?

उत्तर—सूर्यविमान में, सूर्यकान्त आदि मणियों में यह आतप होता है। आतप जीव के कार्यों में से केवल पृथ्वीकाय में ही होता है। आतप भी रूप, रस, गन्ध और स्पर्श का परिणमन ही नहीं है किन्तु पुद्गल की द्रव्यपर्याय है।

प्रश्न ५६—गाथोक्त १० पर्यायों के अतिरिक्त पुदगल की अन्य भी द्रव्यपर्यायें होती हैं या नहीं?

उत्तर—ये १० पर्यायें तो मुख्यता से बताई हैं इनके अतिरिक्त और भी द्रव्यपर्यायें हैं। इनकी पहिचान मुख्य यह है कि जो रूप, रस, गन्ध, स्पर्श गुण का परिणमन तो न हो और स्कन्ध प्रदेशों में परिणमन पाया जावे उन्हें पुद्गल की द्रव्यपर्यायें जानना चाहिये। जैसे—रबड़ का प्रसार, दूध से दही होना, गाड़ी की गति, मुट्ठी का बंधना आदि।

प्रश्न ५७—गुरु, लघु, कोमल, कठोर ये गुणपर्याय हैं या द्रव्य पर्याय हैं?

उत्तर—वास्तव में तो ये द्रव्यपर्यायें हैं किन्तु स्पर्शन इन्द्रिय के विषय होने से इन्हें स्पर्शगुण के पर्यायरूप उपचार से माना है।

प्रश्न ५८—प्रकाश भी चक्षुरिन्द्रिय का विषय होने से रूप गुण का पर्याय माना जाना चाहिए?

उत्तर—प्रकाशरूप गुणा ही काला, पीला, नीला, सफेद इन पाँच पर्यायों से भिन्न है। प्रकाश निमित्त के सद्भाव को पाकर बनता और नष्ट होता है किन्तु रूप की पर्यायें इस तरह न बनती न नष्ट होती हैं। अत: प्रकाश द्रव्यपर्याय ही है।

प्रश्न ५९—स्कंध होने पर क्या परमाणु की स्वभावव्यंजन पर्याय का बिल्कुल अभाव हो जाता है?

उत्तर—शुद्धनय से याने स्वभावदृष्टि से स्कन्धावस्था में भी परमाणु के अन्तःस्वभावव्यंजनपर्याय है, किन्तु स्निग्धत्व रूक्षत्व विभाव के कारण स्वास्थ्यभाव (अपने में ही रहे ऐसे भाव) से भ्रष्ट होकर परमाणु विभावव्यंजनपर्याय रूप हो जाते हैं। जैसे शुद्ध (स्वभाव) दृष्टि से संसारावस्था में भी अन्तजीव के स्वभावव्यंजनपर्याय (सिद्धस्वरूप) है, किन्तु रागद्वेष विभाव के कारण स्वास्थ्यभाव से भ्रष्ट होकर मनुष्य, तिर्यञ्च आदि विभावव्यञ्जन पर्यायरूप हो रहा है।

प्रश्न ६०—इस गाथा से हमें किस शिक्षा पर ध्यान ले जाना चाहिये?

उत्तर—विभावव्यञ्जन पर्याय होने पर भी उस पर्याय को गौणकर मात्र परमाणु पर लक्ष्य देकर वहाँ केवल शुद्ध प्रदेशरूप परमाणु का ध्यान करना चाहिये और इसी प्रकार मनुष्यादि विभावव्यञ्जन पर्याय होने पर भी उस पर्याय को गौण कर मात्र शुद्ध जीवास्तिकाय पर लक्ष्य देकर वहाँ शुद्धजीवास्तिकाय का ध्यान करना चाहिये।

इस प्रकार पुद्गल द्रव्य का वर्णन करके अब धर्मद्रव्य का वर्णन किया जाता है—

गाथा १७

गइपरिणयाण धम्मो पुग्गलजीवाण गमणसहयारी ।
तोयं जह मच्छाणं अच्छंता णेव सो णेई ।।१७।।

अन्वय—गइपरिणयाण पुग्गलजीवाण गमण सहयारी धम्मो । जह मच्छाणं तोयं । सो अच्छंता णेव णेई ।

अर्थ—गमन में परिणत पुद्गल और जीवों के जो गमन में सहकारी निमित्त है उसे धर्मद्रव्य कहते हैं । जैसे जल मछली के गमन में सहकारी है । धर्मद्रव्य ठहरने वाले जीव या पुद्गलों को कभी नहीं ले जाता है ।

प्रश्न १—गमन से यहाँ क्या तात्पर्य है?

उत्तर—एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में चले जाना, यही गमन का तात्पर्य है । थोड़ा हिलना,गोल चलना, यथा कथंचित् मुड़ना आदि सब क्रियायें गमन में अन्तर्गत हैं ।

प्रश्न२—गमन क्रिया कितने द्रव्यों में होती है?

उत्तर—गतिक्रिया केवल जीव और पुद्गल इन दो जाति के द्रव्यों में होती ।

प्रश्न ३—धर्म, अधर्म, आकाश व काल में गतिक्रिया क्यों नहीं होती है?

उत्तर—जीव पुद्गल में ही क्रियावती शक्ति है । धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और कालद्रव्य—इन चार द्रव्यों में क्रियावती शक्ति नहीं है, अत: इनमें गतिक्रिया नहीं हो सकती ।

प्रश्न ४—धर्मद्रव्य स्वयं निष्क्रिय है वह दूसरों की गति में कैसे कारण होगा?

उत्तर-—जैसे जल स्वयं न चलता हुआ भी मछली के गमन में सहकारी कारण है, वैसे धर्मद्रव्य भी स्वयं निष्क्रिय होकर जीव पुद्गल के गमन में सहकारी कारण है ।

प्रश्न ५—धर्मद्रव्य अमूर्त है उसका तो किसी से संयोग भी नहीं हो सकता, फिर यह दूसरों की गति में कैसे कारण हो सकता है?

उत्तर—जैसे सिद्धभगवान अमूर्त हैं तो भी वे "मैं सिद्ध समान अनन्त गुण स्वरूप हूँ" इत्यादि भावनारूप सिद्धभक्ति करने वाले भव्य जीवों के सिद्धगति में सहकारी कारण हैं, वैसे धर्मद्रव्य अमूर्त है तथापि अपने उपादान कारण से चलने वाले जीव व पुद्गलों के गमन में सहकारी कारण है ।

प्रश्न ६—धर्मद्रव्य गति में सहकारी कारण है इसका मर्म क्या है?

उत्तर—कोई भी द्रव्य किसी भी अन्य द्रव्य की परिणति का कर्ता या प्रेरक नहीं होता । जो द्रव्य जिस योग्यता वाला है वह विशिष्ट निमित्त को पाकर स्वयं अपने परिणमन से परिणामता है । इसी न्याय से गमन किया में परिणत जीव, पुद्गल धर्मद्रव्य को निमित्तमात्र पाकर स्वयं अपने उपादान कारण से गतिक्रियारूप परिणम जाते हैं । धर्मद्रव्य किसी को प्रेरणा करके चलाता नहीं है । यही सहकारी कारण का भाव है ।

प्रश्न ७—धर्मद्रव्य कितने हैं?

उत्तर—धर्मद्रव्य एक ही है और उसका परिमाण समस्त लोकप्रमाण है ।

प्रश्न ८—धर्मद्रव्य में कितने गुण हैं?

उत्तर—धर्मद्रव्य में अस्तित्व, वस्तुत्व आदि अनेक सामान्य गुण हैं और अमूर्तत्व निष्क्रियत्व आदि अनेक साधारण गुण हैं । धर्मद्रव्य में असाधारण गुण गतिहेतुत्व है ।

प्रश्न ९—सामान्य गुण न मानने पर क्या हानि है?

उत्तर—सामान्य गुण न मानने पर वस्तु की सत्त्व मात्र ही सिद्ध नहीं होता ।

प्रश्न १०—असाधारणगुण न मानने पर क्या हानि है?

उत्तर—असाधारणगुण न मानने पर वस्तु की अर्थक्रिया ही नहीं हो सकती अर्थात् असाधारण गुण बिना वस्तु ही क्या रहेगी?

प्रश्न ११—क्या सब द्रव्यों में असाधारण गुण होते हैं?

उत्तर—सभी द्रव्यों में एक असाधारण स्वभाव (गुण) होता है ।

प्रश्न १२—जीवद्रव्य का असाधारण गुण कौन है?

उत्तर—जीवद्रव्य का असाधारण गुण चैतन्य है । यह चैतन्य ज्ञान, दर्शन और आनन्द स्वरूप है ।

प्रश्न १३—पुद्गल द्रव्य का असाधारण गुण क्या है?

उत्तर—पुद्गलद्रव्य का असाधारण गुण मूर्तत्व है । यह मूर्तत्व, रूप, रस, गंध, स्पर्शमय है ।

प्रश्न १४—धर्मद्रव्य का असाधारण गुण क्या है?

उत्तर—धर्मद्रव्य का असाधारण गुण गतिहेतुत्व है ।

प्रश्न १५-—अधर्मद्रव्य का असाधारण गुण क्या है?

उत्तर—अधर्मद्रव्य का असाधारण गुण स्थितिहेतुत्व है ।

प्रश्न १६-—कालद्रव्य का असाधारण गुण क्या है?

उत्तर—कालद्रव्य का असाधारण गुण परिणमनहेतुत्व है ।

प्रश्न १७—आकाशद्रव्य का असाधारण गुण क्या है?

उत्तर—आकाशद्रव्य का असाधारण गुण अवगाहनहेतुत्व है ।

प्रश्न १८—धर्मद्रव्य परिणमनशील है या नहीं?

उत्तर—धर्मद्रव्य परिणमनशील है, क्योंकि यह एक सत् है । प्रत्येक सत् परिणमनशील होते हैं, किन्तु धर्मद्रव्य का परिणमन केवल ज्ञानगम्य है । जैसे शुद्ध जीव (परमात्मा) का परिणमन केवल ज्ञानमय है । परिणमनशील होकर भी प्रत्येक द्रव्य नित्य ध्रुव होते हैं । यह धर्मद्रव्य भी नित्य ध्रुव है ।

प्रश्न १९—धर्मद्रव्य एक होकर सबके गमन में सहकारी कारण कैसे हो सकता है?

उत्तर—आकाश के एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश पर पहुंचने का नाम गति है । यह गति एक स्वरूप है, अत: एकस्वरूप गति कार्य में एक धर्मद्रव्य कारण होता है ।

प्रश्न २०—जिस स्थान का जीव पुद्गल चलता है क्या उस स्थान पर रहने वाले धर्मद्रव्य के प्रदेश गतिहेतु हैं या पूर्ण धर्मद्रव्य?

उत्तर—पूर्ण धर्मद्रव्य गतिहेतु है । किसी भी द्रव्य की यह परिस्थिति नहीं होती कि किसी द्रव्य की क्रिया में

किसी अन्य द्रव्य का कुछ भाग निमित्त कारण हो और कुछ न हो ।

प्रश्न २१—धर्मद्रव्य एकप्रदेशी हो और वह कहीं भी स्थित हो वह एक ही सब जीव पुद्गलों के गमन में कारण क्यों न हो जाये?

उत्तर—सभी साक्षात् निमित्तकारण एक क्षेत्रस्थित होते हैं । अत: धर्मद्रव्य लोकालोकव्यापी ही जीव पुद्गलों के गमन में कारण है ।

प्रश्न २२—कुम्भकार तो भिन्न क्षेत्र में रहकर भी घड़े का निमित्त कारण है?

उत्तर—कुम्भकार मिट्टी के परिणमन का साक्षात् निमित्तकारण नहीं है किन्तु आश्रयभूत निमित्तकारण है ।

प्रश्न २३—साक्षात् निमित्तकारण किसे कहते हैं?

उत्तर—अन्तररहित अन्वयव्यतिरेकी कारण को साक्षात् निमित्तकारण कहते हैं । जैसे—सब द्रव्यों के परिणमन सामान्य का साक्षात् निमित्तकारण कालद्रव्य है, तथा अवगाह का निमित्तकारण नभद्रव्य है, जीव पुद्गल की गति का निमित्तकारण धर्मद्रव्य है, जीव पुद्गल की गतिनिवृत्ति का निमित्तकारण अधर्मद्रव्य है आदि ।

प्रश्न २४-—धर्मद्रव्य और धर्म में क्या अन्तर है?

उत्तर—धर्मद्रव्य तो एक स्वतन्त्र द्रव्य है जो गति में उदासीन निमित्त कारण है और धर्म आत्मा के स्वभाव को व आत्मस्वभाव के अवलम्बन से प्रकट होने वाली परिणति को कहते हैं ।

प्रश्न २५—कारण तो प्रेरक ही होते हैं, फिर धर्मद्रव्य को उदासीन निमित्त कारण क्यों कहा?

उत्तर—कोई भी कार्य किसी अन्य की प्रेरणा से नहीं होता, किन्तु परिणमने वाला उपादान कारण अपनी योग्यता के कारण अनुकूल निमित्त का सन्निधान पाकर स्वयं परिणमता है ।

प्रश्न २६—इस विषय का कोई दृष्टान्त है क्या?

उत्तर—जैसे भव्य जीव निजशुद्धात्मा की अनुभूतिरूप निश्चय धर्म के कारण उत्तम संहनन, विशिष्ट तथा पुण्यरूप धर्म का सन्निधान रूप निमित्त कारण पाकर सिद्धगतिरूप परिणमते हैं । जैसे मत्स्य के चलने में जल उदासीन निमित्त कारण है । वैसे जीव पुद्गलों के चलने में धर्मद्रव्य उदासीन निमित्त कारण है ।

इस प्रकार धर्मद्रव्य का वर्णन करके अब इस गाथा में अधर्मद्रव्य का वर्णन करते हैं—

गाथा १८

ठाण जुदाण अधम्मो पुग्गल जीवाण ठाणसहयारी ।
छाया जह पहियाणं गच्छंता णेव सो धरई ।।१८।।

अन्वय—ठाणजुदाण पुग्गल जीवाण ठाणसहयारी अधम्मो । जह पहियाणं छाया । सो गच्छंता णेव धरई ।

अर्थ—ठहरते हुये पुद्गल और जीवों के ठहरने में सहकारी कारण अधर्मद्रव्य है । जैसे मुसाफिरों के ठहरने में छाया सहकारी कारण है । वह अधर्मद्रव्य गमन करते हुये जीव पुद्गलों को नहीं ठहराता है ।

प्रश्न १-—ठहरने से यहाँ क्या तात्पर्य है?

उत्तर—गमन करके ठहराना यहाँ ठहरने का तात्पर्य हैं ।

प्रश्न २-—इस प्रकार का ठहरना कितने द्रव्यों में होता?

उत्तर—यह स्थिति केवल जीव और पुद्गल इन दो द्रव्यों में होती क्योंकि गमनक्रिया भी इन ही दो द्रव्यों में पाई जाती है ।

प्रश्न ३—अधर्मद्रव्य अमूर्त है वह स्थिति में कैसे कारण बनता?

उत्तर—जैसे सिद्धभगवान अमूर्त होकर भी "सिद्ध हूँ, शुद्ध हूँ, अनन्तज्ञानादिसम्पन्न हूँ" इत्यादि सिद्धभक्ति में ठहरते हुए भव्य जीवों के स्वस्थिति में बहिरङ्ग सहकारी कारण होते हैं वैसे अमूर्त होकर भी अधर्मद्रव्य ठहरते हुए जीव, पुद्गलों के ठहरने में सहकारी कारण होता है ।

प्रश्न ४—अधर्मद्रव्य अप्रेरक है, वह कैसे जाते हुये जीव पुद्गलों को ठहरा सकता?

उत्तर—जैसे जाते हुये मुसाफिर वटछाया को निमित्त पाकर अपने ही भाव से और कारण से ठहर जाते हैं वैसे जाते हुये जीव और पुद्गल अधर्मद्रव्य को निमित्त पाकर अपने ही उपादानकारण से ठहर जाते हैं । छाया मुसाफिरों को जबरदस्ती ठहराता नहीं है । अधर्मद्रव्य भी किसी को जबरदस्ती ठहराता नहीं है ।

प्रश्न ५—अधर्मद्रव्य की अन्य विशेषतायें क्या हैं?

उत्तर—अधर्मद्रव्य का असाधारण लक्षण स्थितिहेतुत्व है । शेष सभी विशेषतायें धर्मद्रव्य की तरह हैं अर्थात् अधर्मद्रव्य एक है, लोकव्यापी है, अनन्तगुणात्मक है, निष्क्रिय है, परिणमनशील है, नित्य है आदि ।

प्रश्न ६—अधर्मद्रव्य में और अधर्म में क्या अन्तर हैं?

उत्तर—अधर्मद्रव्य एक स्वतन्त्र द्रव्य है । जो जीव व पुद्गल के ठहरने में सहकारी उदासीन कारण है और अधर्म आत्मस्वभाव से अन्य भावों को आत्मा समझने व अनात्मा में उपयोग लगाने को कहते हैं ।

प्रश्न ७—क्या अधर्मास्तिकाय बिना जीव, पुद्गल स्थित हो सकते हैं?

उत्तर—नहीं, जैसे धर्मास्तिकाय बिना जीव, पुद्गल गति नहीं कर सकते वैसे अधर्मास्तिकाय बिना जीव, पुद्गल स्थित नहीं हो सकते ।

प्रश्न ८—यदि ऐसा है तो धर्म, अधर्मद्रव्य प्रेरक व मुख्य कारण माने जाने चाहिये?

उत्तर—धर्म, अधर्मद्रव्य गति, स्थिति के प्रेरक नहीं है और न ये मुख्य कारण हैं, क्योंकि ये यदि प्रेरक या मुख्य

कारण हो जाये तो इन दोनों का कार्य मात्सर्यपूर्वक होना चाहिये तथा जो द्रव्य गति करे वह गति करे, जो ठहरे वह ठहरे ही आदि अनेक दोष आते हैं ।

प्रश्न ९—उदासीन कारण मानने पर यह अव्यवस्था क्यों नहीं होती?

उत्तर—जीव, पुद्गल निश्चय से अपने परिणमन से गति, स्थिति करते हैं, हाँ यह बात अवश्य है कि वे धर्म अधर्म द्रव्य को निमित्त पाकर गति स्थिति करते हैं, अतः दोष नहीं है ।

प्रश्न १०—धर्म, अधर्मद्रव्य क्या उपादेय तत्त्व हैं या हेय तत्त्व?

उत्तर—शुद्धात्मतत्त्व से भिन्न होने से ये भी हेय तत्त्व हैं ।

इस प्रकार अधर्मद्रव्य का वर्णन करके आकाशद्रव्य का वर्णन करते हैं—

गाथा १९

अवगासदाणजोग्गं जीवादीणं वियाण आयासं ।
जेण्हं लोगागासं अल्लोगागासंमिदि दुबिहं ।।१९।।

अन्वय—जीवादीणं अवगासदाणजोग्गं आयासं वियाण, लोगागासं अलोगागासं दुविहं इदि जेण्हं ।

अर्थ-—जीवादि सर्वद्रव्यों को अवकाश देने में जो समर्थ है उसे आकाश जानो । वह आकाश लोकाकाश और अलोकाकाश इस तरह २ प्रकार का है । वह सब जिनेन्द्रदेव का सिद्धान्त है ।

प्रश्न १-—आकाश द्रव्य कितने हैं?

उत्तर—आकाश एक अखण्ड द्रव्य है ।

प्रश्न २—अखण्ड आकाश के लोकाकाश व अलोकाकाश ये भेद कैसे हो सकते हैं?

उत्तर—ये भेद उपचार से हैं—जितने आकाश देश में सर्वद्रव्य रहते हैं उतने को लोकाकाश कहते हैं और उससे बाहर के आकाश को अलोकाकाश कहते हैं । आकाश में स्वयं भेद नहीं है ।

प्रश्न ३—आकाश में कितनें गुण हैं?

उत्तर-—आकाश में असाधारण गुण तो अवगाहनाहेतुत्व है, इसके अतिरिक्त अस्तित्वादि अनन्तगुण भी हैं । यह द्रव्य भी निष्क्रिय और सर्वव्यापी है । इसका कहीं भी अन्त नहीं हैं ।

प्रश्न ४—यदि सब द्रव्य आकाश में रहते हैं तो सब आकाश मात्र रह जायेगा?

उत्तर—निश्चय से तो प्रत्येक द्रव्य अपने खुद के प्रदेशों में रहता है । बाह्यसम्बन्ध दृष्टि से ये आकाशक्षेत्र में ही पाये जाते हैं अत: व्यवहार से सब द्रव्य आकाश में रहते हैं ऐसा कहा जाता है ।

प्रश्न ५—इस व्यवहार का प्रयोजन क्या है?

उत्तर—इस व्यवहार का प्रयोजन हेय, उपादेय वस्तुओं के परिचय का व्यवहार चलाना है ।

प्रश्न ६—आकाश के वर्णन से यह प्रयोजन कैसे सिद्ध होता है?

उत्तर—यदि आकाश में वस्तुओं के रहने का वर्णन न चले तो मोक्ष कहा, स्वर्ग कहा, नरक कहा आदि सुगमतया कैसे समझाये जा सकते? जैसे निश्चयनय से सहजशुद्ध चैतन्यरस से परिपूर्ण निजप्रदेशों में ही सिद्धप्रभु विराजते हैं, फिर भी व्यवहारनय से सिद्धभगवान मोक्ष शिला में स्थित हैं, ऐसा समझाना कैसे बनेगा?

प्रश्न ७-—मोक्षस्थान कहा है?

उत्तर—निश्चयनय से तो जिन प्रदेशों में आत्मा कर्मरहित हुआ वही मोक्षस्थान है, व्यवहारनय से कर्मरहित आत्माओं के ऊर्ध्वगमन स्वभाव के कारण लोकाग्र में पहुंच जाने से लोकाग्रभाग मोक्षस्थान बताया गया ।

प्रश्न ८-—मनुष्य कहा रहता है?

उत्तर—मनुष्यपर्याय विजातीयपर्याय होने से अनन्त पुद्गलों के प्रदेशों का व आत्मप्रदेशों का बद्धस्पृष्ट समुदाय है । सो वहाँ निश्चय से प्रत्येक परमाणु अपने-अपने प्रदेश में है और आत्मा अपने प्रदेश में है । व्यवहारनय से मनुष्य ढाई द्वीप के भीतर जो जहाँ है वहाँ रहता है ।

प्रश्न ९—यह कौनसा व्यवहार है?

उत्तर—यह उपचरित असद्भूतव्यवहार है। पर्यायरूप से वर्णन है, अत: व्यवहार है, सहजस्वभाव में ऐसा सद्भूत नहीं है, अत: असद्भूत है। दूसरे के नाम से उपचार किया है, अत: उपचरित है।

प्रश्न १०—अकाश जीव, पुद्गलों की गति, स्थिति का भी कारण है, फिर केवल अवगाहनहेतुत्व ही आकाश में क्यों कहा?

उत्तर—आकाश गति स्थिति का कारण नहीं है, क्योंकि यदि आकाश गति स्थिति का कारण हो जाता तो लोक अलोक का विभाजन नहीं रहता। जो गति करता वह असीम क्षेत्र तक गति ही करता रहता व लोकाकाश के बाहर कहीं स्थित भी हो जाता। इस प्रकार आकाशद्रव्य का सामान्य वर्णन करके उसका विशेष वर्णन करते हैं—

गाथा २०

धम्मा धम्मा कालो पुग्गल जीवा य संति जावदिये ।
आयासे सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्तो ।।२०।।

अन्वय—जावदिये आयासे धम्मा धम्मा कालो पुग्गल जीवा य संति सो लोगो त्तोत परदो अलोगुत्तो ।

अर्थ-—जितने आकाश में धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, कालद्रव्य, पुद्गलद्रव्य और जीवद्रव्य हैं वह तो लोकाकाश है और उससे परे अलोकाकाश कहा है ।

प्रश्न १—लोकाकाश का क्या आकार है?

उत्तर—सात पुरुष एक के पीछे एक इस प्रकार खड़े हो और कमर पर हाथ रखे व पैर पसारे खड़े हों । जो आकार उस समय वहाँ है वैसा आकार लोकाकाश का है ।

प्रश्न २—लोकाकाश का परिमाण कितना है?

उत्तर—सर्वलोकाकाश का परिमाण ३४३ घनराजूप्रमाण है । जैसे कि उदाहरण में उस सप्तपुरुषाकार का परिमाण करीब ३४३ घन विलस्त है ।

प्रश्न ३—लोकाकाश के कितने भाग हैं?

उत्तर—लोकाकाश के ३ भाग हैं—(१) अधोलोक, (२) मध्यलोक, (३) ऊर्ध्वलोक ।

प्रश्न ४—अधोलोक का परिमाण क्या है?

उत्तर—अधोलोक का परिमाण १९६ घनराजू है । जैसे दृष्टान्त में कमर से नीचे तक सब १९६ घन विलस्त है ।

प्रश्न ५—मध्यलोक का परिमाण कितना है?

उत्तर—मध्यलोक का परिमाण १ वर्गराजू मात्र है ।

प्रश्न ६—ऊर्ध्वलोक का परिमाण क्या है?

उत्तर-—ऊर्ध्वलोक का परिमाण १४७ घनराजू है । जैसे दृष्टान्त में कमर के ऊपर गर्दन तक १४७ घन विलस्त है ।

प्रश्न ७—लोकाकाश में समस्त प्रदेश कितने हैं?

उत्तर—लोकाकाश में समस्त प्रदेश असंख्यात हैं ।

प्रश्न ८—लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अनन्तानन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, एक धर्मद्रव्य, एक अधर्मद्रव्य, असंख्यात कालद्रव्य इस प्रकार अनन्तानन्त द्रव्य कैसे समा जाते हैं?

उत्तर—जैसे एक दीप के प्रकाश में अनेक दीप प्रकाश समा जाते हैं वैसे आकाश में व अन्य द्रव्यों में भी अनेक द्रव्य समा जाने की योग्यता है, अत: अनेक द्रव्यों का लोकाकाश में अवगाह हो जाता है ।

प्रश्न ९—यदि आकाश में ऐसी अवगाहनशक्ति न मानी जावे तो क्या हानि है?

उत्तर—यदि आकाश में अवगाहनशक्ति न हो तो लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर एक-एक परमाणु ही ठहरेंगे

अन्य परमाणु होंगे ही नहीं, ऐसी स्थिति में जीव के विभाव परिणाम नहीं हो सकते, क्योंकि एक या संख्यात परमाणु विभाव में निमित्त नहीं होते ।

प्रश्न १०—अलोकाकाश में तो कालद्रव्य है नहीं, फिर अलोकाकाश का परिणमन कैसे हो जाता है?

उत्तर—लोकाकाश में स्थित कालद्रव्य के निमित्त से समस्त आकाश का परिणमन हो जाता है ।

प्रश्न ११—लोकाकाश में रहने वाले कालद्रव्य का निमित्त पाकर लोकाकाश का ही परिणमन होना चाहिये?

उत्तर—आकाश एक अखण्ड द्रव्य है, इसलिये आकाश में जो एक परिणमन होता वह पूरे आकाश में होता है । जैसे एक कीली पर चाक घूमता है तो निमित्तभूत कीली तो चाक के बीच के भाग के क्षेत्र में ही है सो कीली पर जितना चाकभाग है केवल उतना ही भाग नहीं घूमता, किन्तु पूरा चाक घूमता है ।

प्रश्न १२—इस आकाशद्रव्य के परिज्ञान से हमें क्या शिक्षा लेनी चाहिये?

उत्तर—यद्यपि व्यवहारदृष्टि से देखने पर यह सत्य है कि मेरा (आत्मा का) वास आकाशप्रदेशों में है तथापि निश्चयदृष्टि से मेरा वास आत्मप्रदेशों में ही है । इसके २ हेतु हैं—(१) अनादि से ही तो आत्मा है और अनादि से ही आकाश है । ऐसा भी कभी नहीं हुआ कि आत्मा कहीं अन्यत्र था और फिर आकाश में रखा गया । (२) आत्मा स्वयं सत् है, अपने गुण पर्यायरूप है, आकाश भी स्वयं सत् है वह अपने गुणपर्यायरूप है, इस कारण कोई भी द्रव्य किसी भी द्रव्य का आधार नही है । अत: मैं आकाशद्रव्य से दृष्टि हटाकर केवल निज आत्मतत्त्व को देखूं यह शिक्षा हमें ग्रहण करनी चाहिये ।

इस प्रकार आकाशद्रव्य का वर्णन करके अब कालद्रव्य का प्ररूपण करते हैं—

गाथा २१

दव्वपरिवट्टरूवो जो सो कालो हवेइ ववहारो ।
परिणामादीलक्खो वट्टणलक्खो य परमट्ठो ।।२१।।

अन्वय—जो परिणामादीलक्खो दव्व परिवट्टरूवो सो ववहारो कालो हवेइ य वट्टणलक्खो परमट्ठो ।

अर्थ—जो परिणाम, आदि द्वारा जाना गया व द्रव्यों के परिवर्तन से जिसकी मुद्रा है वह तो व्यवहार काल है और जिसका वर्तना ही लक्षण है वह निश्चयकाल है ।

प्रश्न १—व्यवहारकाल किसे कहते हैं?

उत्तर—व्यवहार में घंटा, दिन आदि का जो व्यवहार किया जाता है उसे व्यवहारकाल कहते हैं ।

प्रश्न २—व्यवहारकाल के कितने भेद हैं?

उत्तर—समय, आवली, सैकिंड, मिनट, घंटा, दिन, सप्ताह, पक्ष, मास, वर्ष आदि अनेक भेद हैं ।

प्रश्न ३—परिणाम आदि शब्द से क्या-क्या ग्रहण करना चाहिये?

उत्तर—परिणाम, क्रिया, परत्व अपरत्व का ग्रहण करना चाहिये । व्यवहारकाल इन लक्षणों से जाना जाता है ।

प्रश्न ४—परिणाम किसे कहते हैं?

उत्तर—द्रव्यों के परिणमनों को परिणाम कहते हैं । द्रव्य एक अवस्था से दूसरी अवस्था धारण करता है । इन परिणमनों से व्यवहारकाल का निश्चय होता है ।

प्रश्न ५—क्रिया किसे कहते हैं?

उत्तर—एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र पर पहुंचने तथा दूध का खलबलाना आदि हलन चलन को क्रिया कहते हैं । इन दो स्वरूपों के कारण क्रिया दो प्रकार की हो जाती है—(१) देशान्तरचलनरूप, (२) परिस्पंदरूप ।

प्रश्न ६—परत्व किसे कहते हैं?

उत्तर—जेठेपन या प्राचीनता को परत्व कहते हैं । जैसे अमुक बालक २ वर्ष जेठा है आदि ।

प्रश्न ७—अपरत्व किसे कहते हैं?

उत्तर—लहुरेपन या अर्वाचीनता याने नवीनता को अपरत्व कहते । जैसे अमुक बालक २ वर्ष लहुरा है याने छोटा है आदि ।

प्रश्न ८—वर्तना किसे कहते हैं?

उत्तर—पदार्थ के परिणमन में सहकारी कारण होने को वर्तना कहते हैं ।

प्रश्न ९—निश्चयकाल किसे कहते हैं?

उत्तर—समय, मिनट आदि जिसकी पर्यायें होती हैं उस द्रव्य को निश्चयकाल कहते हैं । यह काल द्रव्य समस्त पदार्थों के परिणमन का सहकारी निमित्त कारण है, यही वर्तना काल द्रव्य का लक्षण है ।

प्रश्न १०—क्या वर्तना व्यवहारकाल का लक्षण नहीं है?

उत्तर—वर्तना व्यवहारकाल का भी लक्षण है, उस वर्तना का अर्थ है एक समय मात्र का परिणमना । इससे समय नाम का अनुपचरित व्यवहारकाल जाना जाता है ।

प्रश्न ११—समय का कितना परिमाण है?

उत्तर—एक परमाणु मंद गति से एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश पर पहुंचे उसमें जो काल व्यतीत होता है वह समय है । अथवा नेत्र की पलक गिरने में जितना काल लगता है वह असंख्यात आवली प्रमाण है और एक आवली में असंख्यात समय होते हैं सो आवली के असंख्यातवें भाग में से १ भाग को समय कहते हैं ।

प्रश्न १२—पदार्थों का परिणमन यदि कालद्रव्य के आधीन है तो परिणमन पदार्थों का स्वभाव न ठहरेगा?

उत्तर—पदार्थ का परिणमना तो पदार्थ का स्वभाव ही है इसी को द्रव्यत्व स्वभाव कहते हैं । कालद्रव्य तो परिणमते हुए पदार्थों के परिणमन में मात्र निमित्त कारण है ।

प्रश्न १३—यदि परमाणु को एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश पर पहुंचने में एक समय हो जाता है तब परमाणु को १४ राजूप्रमाण असंख्यात प्रदेशों के उल्लंघन में असंख्यात समय लगते होगे?

उत्तर—तीव्र गति से गमन करने वाला परमाणु एक समय में १४ राजू गमन करता है । मन्द गति से गमन में एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश पर पहुंचना भी एक समय में होता है । जैसे कोई पुरुष मन्दी चाल से २०० मील २० दिन में जाता है वही विद्या सिद्ध होने पर तीव्र गति से २०० मील १ दिन में भी जा सकता है तो यह टाइम कहीं २० दिन का थोड़े ही कहलावेगा इसी प्रकार परमाणु मन्द गति एक प्रदेश तक १ समय में जाता है और तीव्र गति से असंख्यात प्रदेश सीधा (१४ राजू) एक समय में जाता है ।

प्रश्न १४—समय तो सत्य है किन्तु निश्चयकालद्रव्य कुछ प्रतीत नहीं होता?

उत्तर—यदि समय ही समय मानते तो समय तो ध्रुव है नहीं, वह उत्पन्न होता और दूसरे क्षण नष्ट होता अत: समय पर्याय सिद्ध हुई । अब यह समय नामक पर्याय किस द्रव्य की है । जिस द्रव्य की है उसी का नाम कालद्रव्य कहा गया है ।

प्रश्न १५—कालद्रव्य तो अन्य सब पदार्थों की परिणति का निमित्त कारण है—कालद्रव्य की परिणति का कौन निमित्त कारण है?

उत्तर—कालद्रव्य की परिणति का निमित्त कारण वही कालद्रव्य है जैसे कि सब पदार्थों के अवगाह का कारण आकाश है और आकाश के अवगाह का कारण आकाश स्वयं है ।

प्रश्न १६—समय का उपादानकारण परमाणु का गमन है काल नहीं?

उत्तर—समय का उपादानकारण यदि परमाणु है तो परमाणु के रूप, रसादि समय में होना चाहिये सो तो है नहीं । इस कारण समय का उपादानकारण परमाणु नहीं है ।

प्रश्न १७—मिनट का उपादानकारण तो घड़ी के मिनट वाले कांटे का एक चक्कर लगाना तो प्रत्यक्ष दिखता?

उत्तर—घड़ी का कांटा मिनट का कारण नहीं है, कांटे की वह क्रिया तो उतने समय का संकेत करने वाली है । यदि कांटे की पर्याय मिनट होता तो मिनट में भी कांटे का रूप, रस सादि पाया जाना चाहिये, क्योंकि कार्य उपादानकारण के सदृश देखा जाता है ।

प्रश्न १८—समयादि व्यवहारकाल के निमित्तकारण क्या-क्या हो सकते हैं?

उत्तर—परमाणु का मन्द गति से एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश पर जाना, नेत्र की पलक उघाड़ना छिद्र वाले बर्तन से जल या रेत का गिरना, सूर्य का उदय, अस्त होना आदि अनेक पुद्गलों के परिणमन व्यवहारकाल के निमित्त कारण है ।

प्रश्न १९—उक्त पुद्गल परिणमन क्या कारक कारण है या ज्ञापक कारण है?

उत्तर—उक्त पुद्गल परिणमन समयादि के ज्ञापक कारण हैं, क्योंकि वास्तव में तो कालपरिणमन में कालद्रव्य ही उपादानकारण है और कालद्रव्य ही निमित्त कारण है ।

प्रश्न २०—इस तरह तो जीवादि के परिणमन में कालद्रव्य भी ज्ञापक कारण होना चाहिये?

उत्तर—काल परिणमन सदृश है तथा कालद्रव्य के ज्ञापकता की कोई व्याप्ति भी नहीं बनती, अत: वह जीवादिपरिणमन का ज्ञापक कारण नहीं बन सकता ।

प्रश्न २१—इस गाथा से हमें क्या ध्येय स्वीकार करना चाहिये?

उत्तर—यद्यपि काललब्धि को निमित्त पाकर भी निजशुद्धात्मा के सम्यक् श्रद्धान, ज्ञान आचरणरूप मोक्षमार्ग पाता है, किन्तु वहाँ आत्मा ही उपादानकारण और उपादेय मानना चाहिये, काल बाह्यतत्त्व होने से हेय ही है ।

इस प्रकार कालद्रव्य का स्वरूप बताकर अब उनकी संख्या व स्थान बताते हैं—

गाथा २२

लोयायास पदे से इक्किक्के जे ठिया हु इक्केक्का ।
रयणाणं रासी इव ते कालाणू असंखदव्वाणि ।।२२।।

अन्वय—इक्किक्के लोयायास पदे से रयणाणं रासी इव इक्का हु ठिया कालाणु ते असंखदव्वाणि ।

अर्थ—एक-एक लोकाकाश के प्रदेश पर रत्नों की राशि के समान भिन्न-भिन्न एक-एक स्थित कालद्रव्य हैं और वे असंख्यात हैं ।

प्रश्न १-—कालद्रव्य को कालाणु क्यों कहते हैं?

उत्तर—कालद्रव्य एकप्रदेशी है अथवा परमाणु मात्र के प्रमाण का है, इसलिये इसे कालाणु कहते हैं ।

प्रश्न २—अणु कितने तरह से होते हैं?

उत्तर—अणु चार प्रकार से देखे जाते हैं—(१) द्रव्याणु, (२) क्षेत्राणु, (३) कालाणु और भावाणु ।

प्रश्न ३—द्रव्याणु किसे कहते हैं?

उत्तर-—जो द्रव्य याने पिण्डरूप से अणु हो वह द्रव्याणु है । द्रव्याणु परमाणु को कहते हैं । यह स्वतन्त्र द्रव्य है ।

प्रश्न ४—क्षेत्राणु किसे कहते हैं?

उत्तर—जो क्षेत्र में अणु हो वह क्षेत्राणु है । क्षेत्राणु आकाश के एक प्रदेश को कहते हैं । यह स्वतन्त्र द्रव्य नहीं है, किन्तु आकाश द्रव्य का कल्पित देशांश है ।

प्रश्न ५—कालाणु किसे कहते हैं?

उत्तर—अणुप्रमाण कालद्रव्य को कालाणु कहते हैं । यह निश्चय कालद्रव्य है । समय में जो सबसे अणु हो उसे भी कालाणु कहते हैं यह समय नाम की पर्याय है ।

प्रश्न ६—भावाणु किसे कहते हैं?

उत्तर—जो भावरूप से अणु हो, सूक्ष्म हो वह भावाणु है भावाणु से तात्पर्य यहाँ चैतन्य से है, अभेदविवक्षा से भावाणु से जीव का भी ग्रहण होता है ।

प्रश्न ७—कालद्रव्य एक ही माना जावे और उसके प्रदेश असंख्यात मान लिये जावें तो धर्मद्रव्य की तरह इसकी व्यवस्था हो जावे ।

उत्तर—पदार्थों के परिणमन नाना प्रकार के होते हैं, उनके निमित्तभूत कालद्रव्य लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर स्थित हैं । कालद्रव्य असंख्यात ही हैं ।

प्रश्न ८—क्या कालद्रव्य उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्त है?

उत्तर—कालद्रव्य उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्त है । नवीन समय के पर्याय रूप से तो उत्पाद होता है और पूर्व समय पर्याय के व्यय रूप से व्यय होता है और उत्पाद व्यय के आधारभूत कालद्रव्य के रूप से ध्रौव्य है ।

प्रश्न ९—कालद्रव्य न मानकर केवल घड़ी घंटा समयादि व्यवहारकाल ही माना जावे तो इसमें क्या आपत्ति

है?

उत्तर—व्यवहारकाल पर्याय है क्योंकि वह व्यतिरेकी है और क्षणिक है । उस व्यवहार काल का आधारभूत कोई द्रव्य है ही । इस आधारभूत द्रव्य का नाम कालद्रव्य रखा है ।

प्रश्न १०—वास्तव में तो कालद्रव्य का पर्याय समय ही है, समय समूहों में कल्पना करके मिनट घण्टा आदि मान लिये, वे कैसे पर्याय हो सकते?

उत्तर—वास्तव में तो पर्याय समय ही है, अत: व्यवहारकाल भी वस्तुत: समय ही है तथापि वास्तविक समयों के समूह वाले मिनट घण्टा आदि का व्यवहार उपयोगी होने से उसे सबको भी व्यवहारकाल कहा है । इस प्रकार कालद्रव्य का वर्णन करके षड्द्रव्यों में से जो-जो अस्तिकाय हैं उनका वर्णन किया जाता है—

गाथा २३

एवं छब्भेयमिदं जीवाजीवाप्पभेददो दव्वं ।
उत्तं कालविजुत्तं णायव्वा पंच अत्थिकाया हु ।।२३।।

अन्वय—एवं जीवाजीवप्पभेददो दव्वं छब्भेयं उत्तं, हु कालविजुत्तं पंच अत्थिकाया णायव्वा ।

अर्थ—इस प्रकार एक जीव और ५ अजीवों के भेद से यह सब द्रव्य ६ प्रकार वाला कहा गया है, परन्तु कालद्रव्य को छोड़कर शेष ५ द्रव्य अस्तिकाय जानना चाहिये ।

प्रश्न १—द्रव्य वास्तव में क्या ६ ही होते हैं?

उत्तर—द्रव्य तो वास्तव में अनन्तानन्त हैं क्योंकि स्वरूपसत्त्व सबका भिन्न-भिन्न ही है । इसका प्रमाण स्पष्ट है कि प्रत्येक पदार्थ का चतुष्टय अपने आपमें है । एक द्रव्य का चतुष्टय अन्य द्रव्य में नहीं पहुंचता । फिर भी जो-जो द्रव्य असाधारणगुण से भी पूर्ण समान हैं उनकी एक-एक जाति मानकर द्रव्य को ६ प्रकार की कहा है ।

प्रश्न २—चतुष्टय से तात्पर्य क्या है?

उत्तर—द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव इन चार को यहाँ चतुष्टय शब्द से कहा गया है ।

प्रश्न ३—द्रव्य किसे कहते हैं?

उत्तर—जो स्वयं परिपूर्ण सत् है, एक पिण्ड है उसे द्रव्य कहते हैं । अथवा क्षेत्रकाल भाव को एक समुदाय में द्रव्य कहते हैं ।

प्रश्न ४—क्षेत्र किसे कहते हैं?

उत्तर—वस्तु के प्रदेशों को क्षेत्र कहते हैं । प्रत्येक वस्तु का कोई आकार होता है वह क्षेत्र से ही होता है । इसका अपरनाम देशांश भी है ।

प्रश्न ५—काल किसे कहते हैं?

उत्तर—परिणमन याने पर्याय को काल कहते हैं । प्रत्येक वस्तु किसी न किसी पर्याय (हालत) में होती है । पर्याय का अपरनाम गुणांश भी है ।

प्रश्न ६—भाव किसे कहते हैं?

उत्तर—पदार्थ के स्वभाव को भाव कहते हैं । शक्ति, गुण, शील, धर्म, ये इसके पर्यायवाची नाम हैं ।

प्रश्न ७—कोई पदार्थ किसी अन्य के चतुष्टयरूप नहीं है इसका स्पष्ट भाव क्या?

उत्तर—एक पदार्थ दूसरे पदार्थ के द्रव्यरूप नहीं है अर्थात् प्रत्येक पदार्थ का स्वरूपसत्त्व जुदा-जुदा है । प्रदेश भी जुदे-जुदे हैं यह क्षेत्र की भिन्नता है । कोई पदार्थ किसी अन्य पदार्थ की परिणति से नहीं परिणमता यह काल की भिन्नता है । कोई पदार्थ किसी अन्य पदार्थ के गुणरूप नहीं होता है यह भाव की भिन्नता है । इस तरह अनेकान्तात्मक वस्तु में रहने वाले अनेक धर्म स्याद्वाद से सिद्ध हो जाते हैं ।

प्रश्न ८—अनेकान्त किसे कहते हैं?

उत्तर—जिसमें अनेक अन्त याने धर्म हों उसे अनेकान्त कहते हैं । इस सिद्धान्त का नाम भी अनेकान्त है ।

इसको प्रकट करने की पद्धति स्याद्वाद है ।

प्रश्न ९—स्याद्वाद किसे कहते हैं?

उत्तर—अनेकानात्मक वस्तु के धर्मों को स्यात् अर्थात् अपेक्षा से वाद याने कहना स्याद्वाद है । स्याद्वाद का दूसरा नाम अपेक्षावाद भी है ।

प्रश्न १०—सप्रतिपक्ष एक धर्म को स्याद्वाद कितने प्रकार से कह सकता है?

उत्तर—सप्रतिपक्ष एक धर्म को स्याद्वाद सात प्रकार से कह सकता है । उस धर्म के विषय में अस्ति, नास्ति, अवक्तव्य, अस्ति अवक्तव्य, नास्ति अवक्तव्य, अस्ति नास्ति, अस्ति नास्ति अवक्तव्य । इसे नयसप्तभङ्गी कहते हैं ।

प्रश्न ११—इन सातों भङ्गों का क्या भाव है?

उत्तर—इन भङ्गों को एक धर्म का आश्रय करके घटावें । जैसे नित्य धर्म का प्रकरण बनाकर देखा तो वस्तु स्यात् नित्य है, वस्तु स्यात् नित्य नहीं (अनित्य) है, वस्तु स्यात् अवक्तव्य है, वस्तु स्यात् नित्य अवक्तव्य है, वस्तु स्यात् अनित्य अवक्तव्य है, वस्तु स्यात् नित्य और अनित्य है, वस्तु स्यात् नित्य अनित्य अवक्तव्य है ।

प्रश्न १२—इन भङ्गों की अपेक्षायें क्या-क्या हैं?

उत्तर—वस्तु द्रव्यदृष्टि से नित्य है, पर्यायदृष्टि से अनित्य है, परमार्थ से युगपूद्दृष्टि से अवक्तव्य है, द्रव्य व युगपद्दृष्टि से नित्य अवक्तव्य है, पर्याय व युगपद्दृष्टि से अनित्य अवक्तव्य है, द्रव्य व पर्यायदृष्टि से नित्य अनित्य है, द्रव्य व पर्यायदृष्टि एवं युगपद्दृष्टि से नित्य अनित्य अवक्तव्य है ।

प्रश्न १३—स्यात् शब्द का अर्थ क्या "शायद" नहीं होता?

उत्तर—स्यात् शब्द का अर्थ "शायद" होता ही नहीं, स्यात् शब्द अपेक्षा अर्थ में निपातित है ।

प्रश्न १४-—अस्तिकाय ५ ही क्यों होते हैं?

उत्तर—अस्तिकाय सम्बन्धी सब विवरण आगे २४वीं गाथा में किया जा रहा है, उससे जानना चाहिये ।

इस प्रकार द्रव्यजाति और अस्तिकाय जाति की संख्या बताकर अब अस्तिकाय का निरुक्त्यर्थ सहित विवरण करते हैं—

गाथा २४

संति जदो तेणेदे अत्थित्ति भणंति जिणवरा जम्हा ।
काया इव वहुदेसा तम्हा काया य अत्थिकाया य ।।२४।।

अन्वय—जदो एदे संति तेण अत्थित्ति जिणवरा भणंति, जम्हा काया इव वहुदेसा तम्हा काया, य अत्थिकाया ।

अर्थ—जिस कारण ये पूर्वोक्त पांच द्रव्य जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश हैं याने विद्यमान हैं उस कारण इन्हें "अस्ति" ऐसा जिनेन्द्रदेव प्रकट करते हैं और जिस कारण से ये काय के समान बहुत प्रदेश वाले हैं, इस कारण इन्हें काय कहते हैं । ये पांचों पदार्थ अस्ति और काय हैं, इसलिये इन्हें अस्तिकाय कहते हैं ।

प्रश्न १—सत् का क्या लक्षण है?

उत्तर—उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् जो उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य करि युक्त हो उसे सत् कहते हैं । उक्त पाँचों पदार्थ उत्पादव्ययध्रौव्य युक्त हैं, इसी कारण 'अस्ति' संज्ञा उनकी युक्त है ।

प्रश्न २—उत्पाद किसे कहते हैं?

उत्तर—नवीन पर्याय (वर्तमान पर्याय) के होने को उत्पाद कहते हैं ।

प्रश्न ३—व्यय किसे कहते हैं?

उत्तर—पूर्वपर्याय के अभाव होने को व्यय कहते हैं ।

प्रश्न ४—जो है उसका नाश तो नहीं होता, फिर पूर्व पर्याय का अभाव कैसे हो गया?

उत्तर—पर्याय सत् नहीं है, किन्तु सत् द्रव्य की एक हालत है । पूर्वपर्याय के व्यय का तात्पर्य यह है कि द्रव्य पूर्व क्षण में एक हालत (परिणमन) में था अब वह वर्तमान में अन्य परिणमनरूप परिणम गया । द्रव्य का परिणमन स्वभाव है । वर्तमान परिणमन पूर्व परिणमन नहीं है, अतः पूर्वपर्याय का व्यय हुआ ।

प्रश्न ५—ध्रौव्य किसे कहते हैं?

उत्तर—अनादि से अनन्तकाल तक पर्यायों से परिणमते रहने याने बने रहने को ध्रौव्य कहते हैं ।

प्रश्न ६—काल भी तो सत् है उसे "अस्ति" में क्यों ग्रहण नहीं किया?

उत्तर—यहाँ अस्तिकाय का प्रकरण है, केवल 'अस्ति' का नहीं हैं । कालद्रव्य 'अस्ति' तो है, किन्तु काय नहीं है, अतः पांचों द्रव्यों से अस्तिकाय बनाने में "अस्ति" घटाया है ।

प्रश्न ७—उत्पादव्ययध्रौव्य भिन्न समय में होते हैं या एक ही साथ?

उत्तर—ये तीनों एक ही साथ याने एक ही समय में होते हैं, क्योंकि वर्तमान परिणमन है उसे ही नवीन पर्याय की दृष्टि से उत्पाद कहते हैं और उसे ही पूर्वपर्याय का व्यय कहते हैं और ध्रौव्य तो सदा रहने का नाम है ही । अनन्त पर्यायों में जो एक सामान्य चला ही जाता है उस एक सामान्य स्वभाव का ध्रौव्य निरन्तर है ।

प्रश्न ८—काय शब्द का निरुक्त्यर्थ क्या है?

उत्तर—'चीयते इति कायः' जो संगृहीत हो उसे काय कहते हैं ।

प्रश्न ९—क्या द्रव्यों के प्रदेश संग्रहीत हुए हैं?

उत्तर—द्रव्यों के प्रदेश संग्रहीत नहीं हुए हैं, अनादि से द्रव्य सहज स्वप्रदेशमय है। किन्तु संगृहीत आहारवर्गणाओं के पुञ्जरूप काय याने शरीर की तरह द्रव्यों में भी बहुप्रदेश हैं, अत: इन पांचों द्रव्यों को भी काय कहते हैं।

प्रश्न १०—क्या शुद्ध द्रव्य में भी बहुप्रदेशीपना रहता है?

उत्तर—धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य व आकाशद्रव्य—ये तीन अस्तिकाय तो सदा शुद्ध ही रहते हैं और बहुप्रदेशी हैं। पुद्गलस्कन्ध में से किसी पुद्गलद्रव्य के शुद्ध होने पर भी याने केवल परमाणु रह जाने पर भी शक्ति की अपेक्षा बहुप्रदेशीपना है। जीव द्रव्य के शुद्ध होने पर याने द्रव्यकर्म, भावकर्म और नोकर्म इन सबसे मुक्त होने पर भी वह बहुप्रदेशी रहता है।

प्रश्न ११—अशुद्ध द्रव्य के शुद्ध हो जाने पर सत्ता कैसे रहती?

उत्तर—पुद्गल स्कन्ध में से पुद्गल परमाणु के शुद्ध होने पर भी और संसारी जीव के संसार से मुक्त होने पर भी सत्ता रहती है, क्योंकि उनमें उत्पादव्ययध्रौव्य निरंतर रहता ही है।

प्रश्न १२—परमाणु में उत्पाद व्यय ध्रौव्य कैसे है?

उत्तर—स्कंध रूप की विभावव्यञ्जन पर्याय का व्यय शुद्ध परमाणुरूप स्वभावव्यञ्जन पर्याय का उत्पाद शुद्ध परमाणु में है और द्रव्यत्व अथवा प्रदेश वही है सो ध्रौव्य है, इस तरह शुद्ध परमाणु में उत्पादव्ययध्रौव्य है। यह व्यञ्जनपर्याय की अपेक्षा उत्पादव्ययध्रौव्य हुआ।

प्रश्न १३—शुद्ध परमाणु में अर्थ पर्याय की अपेक्षा उत्पादव्ययध्रौव्य कैसे है?

उत्तर—शुद्ध परमाणु में वर्तमान रूप, रसादि गुणों की पर्याय का उत्पाद व पूर्व की रूप, रसादि पर्याय का व्यय और परमाणु वही है सो ध्रौव्य इस प्रकार उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य है।

प्रश्न १४—शुद्ध जीव में उत्पाद व्यय ध्रौव्य कैसे है?

उत्तर—मनुष्यगतिरूप विभावव्यञ्जन पर्याय का व्यय व सिद्धपर्यायरूप स्वभाव व्यञ्जनपर्याय का उत्पाद और जीव प्रदेश वही है अथवा द्रव्यत्व वही है सो ध्रौव्य इस प्रकार शुद्ध जीव में उत्पाद व्यय ध्रौव्य है। यह व्यञ्जनपर्याय की अपेक्षा उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य है।

प्रश्न १५—अर्थपर्याय की अपेक्षा शुद्ध जीव में उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य कैसे है?

उत्तर—परमसमाधिरूप कारणसमयसार का व्यय और अनन्तज्ञान, दर्शन, आनन्द विकास रूप कार्यसमयसार का उत्पाद व जीवद्रव्य वही है सो यही है ध्रौव्य, इस प्रकार शुद्ध जीव में उत्पाद व्यय ध्रौव्य है।

प्रश्न १६—यह तो मुक्त होने के समय का उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य है, क्या मुक्त होने पर भविष्यत्कालों में भी उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य सिद्ध जीवों में होता है?

उत्तर—वर्तमान केवलज्ञान आदि शुद्ध विकास का उत्पाद व पूर्वक्षणीय केवलज्ञान आदि शुद्ध विकास का व्यय व द्रव्य वही, इस प्रकार उत्पाद व्यय ध्रौव्य रहता है। सिद्ध जीवों में शुद्ध विकासरूप शुद्ध परिणमन ही प्रतिसमय नव-नव होता रहता है।

प्रश्न १७—किस द्रव्य में कितने प्रदेश हैं?

उत्तर—प्रदेशों की संख्या का वर्णन आगे की गाथा में किया जा रहा है, सो उस गाथा से जानना चाहिये । अब किस द्रव्य के कितने प्रदेश हैं, यह वर्णन करते हैं—

गाथा २५

होंति असंखा जीवे धम्माधम्मे अणंत आयासे ।
मुत्ते तिविह पदेसा कालस्सेगो ण तेण सो काओ ।।२५।।

अन्वय—जीवे धम्माधम्मे असंखा, आयासे अणंत, मुत्ते तिविह पदेसा होंति । कालस्सेगो तेण सो काओ णत्थि ।

अर्थ—जीवद्रव्य, धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य में असंख्यात प्रदेश हैं, आकाश में अनन्त प्रदेश हैं और मूर्त (पुद्गल) द्रव्य में संख्यात, असंख्यात व अनन्त ऐसे तीनों प्रकार के प्रदेश होते हैं । काल द्रव्य के एक ही प्रदेश है इस कारण यह अस्तिकाय नहीं है ।

प्रश्न १—जीव, धर्म, अधर्मद्रव्य में बराबर के असंख्यात प्रदेश हैं या कम अधिक?

उत्तर—इन तीनों द्रव्यों में बराबर के प्रमाण के प्रदेश हैं, कम या अधिक नहीं । यहाँ जीव से एक जीव ग्रहण करना चाहिये । प्रत्येक जीव में असंख्यात प्रदेश होते हैं ।

प्रश्न २—ये असंख्यात प्रदेश ऊनी संख्या के हैं या पूरी संख्या के?

उत्तर—ये असंख्यात पूरी संख्या पर पूरे होते हैं २-४-६ आदि संख्या को जिनमें २ का भाग जाकर नीचे कुछ शेष न बचे ऐसी परिमाण को पूरी संख्या वाला परिमाण कहते हैं ।

प्रश्न ३—जीवद्रव्य में असंख्यात प्रदेश कैसे विदित हो सकते हैं?

उत्तर—जीवद्रव्य लोकपूरक समुद्धात में पूरा फैल पाता है । इस समुदधात में जीव लोक के सब प्रदेशों में ही रहता वहाँ लोक के एक-एक प्रदेश पर जीव का एक-एक प्रदेश हैं और लोक के प्रदेश असंख्यात हैं, यों जीव द्रव्य भी असंख्यात प्रदेशी है । निश्चयनय से जीव अखण्ड प्रदेशी है । उसमें प्रदेश संख्या का विभाव व्यवहारनय से किया है ।

प्रश्न ४—धर्मद्रव्य व अधर्मद्रव्य में असंख्यात प्रदेश क्यों होते हैं?

उत्तर—धर्मद्रव्य व अधर्मद्रव्य केवल लोकाकाश में सबमें व्याप्त हैं, अत: ये दोनों द्रव्य भी असंख्यात प्रदेश वाले हैं ।

प्रश्न ५—आकाश में अनन्त प्रदेश क्यों हैं?

उत्तर—आकाश निःसीम है इसका कहीं भी अन्त नहीं, अत: आकाश के अनन्त प्रदेश निर्बाध सिद्ध हैं ।

प्रश्न ६—पुद्गल में तीन प्रकार के परिमाण के प्रदेश क्यों हैं?

उत्तर—पुद्गल स्कन्ध कोई संख्यात परमाणुवों का है कोई असंख्यात परमाणुवों का है, कोई अनन्त परमाणुवों का है, अत: पुद्गल को तीन प्रकार के परिमाण वाले प्रदेशयुक्त कहा है । इसके प्रदेश परिमाण, पूर्वोक्त तीन द्रव्यों की तरह आकाश क्षेत्र घेरने की अपेक्षा से नहीं लगाना चाहिये ।

प्रश्न ७—पुद्गल के प्रदेश आकाशक्षेत्र की अपेक्षा से क्यों नही?

उत्तर—यदि आकाश क्षेत्र घेरने की अपेक्षा से पुद्गल प्रदेश माने जावें तो केवल असंख्यात प्रदेशी ही पुद्गल

स्कन्ध समा सकते हैं अन्य कोई स्कन्द भी नहीं होंगे । सो ऐसा प्रत्यक्षविरुद्ध हैं और ऐसा मानने पर जीव द्रव्य अशुद्ध भी सिद्ध नहीं हो सकता ।

प्रश्न ८—पुद्गल स्कन्ध तो पर्याय है वास्तविक पुद्गल द्रव्य में कितने प्रदेश हैं?

उत्तर—वास्तव में पुद्गलद्रव्य परमाणु का नाम है उसमें प्रदेश एक ही होता है, किन्तु उसमें स्कंधरूप से परिणति हो जाने का सामर्थ्य है अत: वह प्रदेशी माना है । यह तीन प्रकार से प्रदेशपरिमाण पुद्गल स्कन्धों का कहा है ।

प्रश्न ९—जीवद्रव्य जब लोकभर में फैले तभी क्या असंख्यात प्रदेश में रहता है, अन्य समय क्या कम क्षेत्र में रहता है?

उत्तर—जीवद्रव्य सदा असंख्यात प्रदेशों में रहता है । छोटी अवगाहना के देह में भी हो तो वह देह भी आकाश के असंख्यात प्रदेशों में विस्तृत होता है । सारा लोक भी असंख्यात प्रदेश वाला है और छोटी देहावगाहना जितने क्षेत्र को घेरता है वह भी असंख्यात प्रदेश प्रमाण है । असंख्यात असंख्यात प्रकार के होते हैं ।

प्रश्न १०—कालद्रव्य के एक प्रदेशमात्रपने की सिद्धि कैसे है?

उत्तर—यदि कालद्रव्य एक प्रदेशमात्र न हो तो समय पर्याय की उत्पत्ति नहीं हो सकती । एक द्रव्याणु याने परमाणु एक कालाणु से दूसरे कालाणु पर मन्दगति से गमन करे वहाँ समय पर्याय की प्रसिद्धि है । यदि कालद्रव्य बहुप्रदेशी होता तो एक समय की निष्पत्ति नहीं होती ।

अब एक प्रदेशी होने पर भी पुद्गल परमाणु के अस्तिकायपना सिद्ध करते हैं—

गाथा २६

एयपदेसोवि अणू णाणाखंधप्पदेसदो होदि ।
बहुदेसो उवयारा तेण य काओ भणंति सव्वण्हू ।।२६।।

अन्वय—एयपदेसोवि अणू णाणाखंधप्पदेसदो बहुदेसो उवयारा होदि, तेण य सव्वण्हू उवयारा काओ भणंति ।

अर्थ—एक प्रदेश वाला होने पर भी अनेक स्कन्धों के प्रदेशों की दृष्टि से बहुप्रदेशी उपचार से होता है और इस ही कारण सर्वज्ञ देव परमाणु को उपचार से अस्तिकाय कहते हैं ।

प्रश्न १—परमाणु का आकार क्या है?

उत्तर—परमाणु एक प्रदेशमात्र है, अत: उसका व्यक्त आकार तो नहीं है, अव्यक्त आकार है । वह आकार षट्कोण है । इसी कारण सब ओर से परमाणुवों का बन्ध होने पर स्कन्ध में छिद्र या अन्तर नहीं होता ।

प्रश्न २—परमाणु कितने प्रकार का हैं?

उत्तर—परमाणु व्यञ्जन पर्याय से तो एक ही प्रकार का है किन्तु गुणपर्याय की अपेक्षा २०० प्रकार के होते हैं ।

प्रश्न ३—परमाणु २०० प्रकार के किस तरह होते हैं?

उत्तर—परमाणु में रूप की पांच पर्यायों में से कोई एक, रस की पांच पर्यायों में से कोई एक, गन्ध की दो पर्यायों में से कोई एक, स्पर्श की ४ पर्यायों में से २ याने स्निग्ध रूक्ष में एक व शीत उष्ण में एक । इस प्रकार ५×५×२×४=२०० प्रकार हो जाते ।

प्रश्न ४—परमाणु शुद्ध होकर फिर अशुद्ध (स्कन्ध रूप में) क्यों हो जाता है ?

उत्तर—परमाणु के अशुद्ध होने का कारण स्निग्ध रूक्ष परिणमन है । शुद्ध होने पर अर्थात् केवल एक परमाणु रह जाने पर भी स्निग्ध या रूक्ष परिणमन रहता ही है, अत: स्निग्ध या रूक्ष परिणमन रूप कारण के होने से स्कन्ध रूप कार्य का होना याने अशुद्ध होना युक्त हो जाता है ।

प्रश्न ५-—शुद्ध जीव फिर अशुद्ध क्यों नहीं होता है?

उत्तर—जीव के अशुद्ध होने का कारण रागद्वेष है । यह रागद्वेष चारित्र गुण का विकार है । जीव के शुद्ध होने पर रागद्वेष का अत्यन्त अभाव (क्षय) हो जाता है और चारित्र गुण का स्वभावरूप स्वच्छ परिणमन हो जाता है । इस तरह अशुद्ध होने के कारणभूत राग द्वेष के न पाये जानें से शुद्ध जीव फिर अशुद्ध नहीं हो सकता ।

प्रश्न ६—किस व्यवहारनय से परमाणु को अस्तिकाय कहा गया है?

उत्तर—अनुपचरित अशुद्ध सद्भूत शक्तिरूप व्यवहारनय से परमाणु को अस्तिकाय कहा जाता है, क्योंकि परमाणु अशुद्ध स्कन्धरूप होने की अनुपचरित शक्ति रखता है ।

प्रश्न ७—द्व्यणुक, त्र्यणुक आदि स्कन्ध आकाश के कितने प्रदेशों में रहते हैं?

उत्तर-—एक, दो आदि स्कन्ध प्रदेशों आदि में कितने भी कम में रह सकते हैं । इसका कारण परमाणुवों का परमाणु में अप्रतिघात शक्ति का होना है ।

प्रश्न ८—परमाणु कैसे उत्पन्न होता है?

उत्तर-—परमाणु मनुष्य आदि किसी के चेष्टा से उत्पन्न नहीं होता है । वह तो स्वयं स्कन्ध से अलग होकर परमाणु रह जाता है । परमाणु की उत्पत्ति भेद से ही होती है अर्थात् स्कन्ध से अलग होने से ही होती है ।

प्रश्न ९—स्कन्ध कैसे बनता है?

उत्तर—स्कन्ध भेद से भी बनता है और संघात अर्थात् मेल से भी बनता है । कुछ स्कंधांशों का भेद होने से और कुछ स्कंधांशों का संघात होने से अर्थात् भेदसंघात से भी बनता है ।

प्रश्न १०—स्कन्ध भी भेद से बनता है तो क्या परमाणु और इस स्कन्ध के बनने का एक ही उपाय है?

उत्तर—परमाणु बनने का भेद तो अन्तिम भेद है, परन्तु स्कन्ध बनने का भेद अन्तिम नहीं अर्थात् वहाँ अनेक परमाणुवों के स्कन्ध का भेद होने पर भी अनेक परमाणुवों का स्कन्ध रहता है । जैसे ५०० परमाणुवों के स्कन्ध का ऐसा भाग हो जाये कि एक स्कन्धांश ३०० परमाणुओं का रह जाये व दूसरा स्कन्ध २०० परमाणुवों का रह जाये इत्यादि ।

प्रश्न ११—इस परमाणु को जानकर हमें क्या शिक्षा लेनी चाहिये?

उत्तर—जैसे एक परमाणु निरुपद्रव है उसके साथ अन्य परमाणुओं का संयोग बंध होने से उसे नाना स्थितियों में गुजरना पड़ता है । इसी तरह मैं भी एक रहूं तो निरुपद्रव हूँ । परद्रव्य के संयोग, बन्ध उपयोग से ही अनेक योनियों में गुजरना पड़ता है । अत: उपद्रव से निवृत्त होने के लिये अपने एकत्व का ध्यान करना चाहिये ।

अब प्रदेश का लक्षण बताते हैं—

गाथा २७

जावदियं आयासं अविभागी पुग्गलाणुवट्टद्धं ।
तं खु पदेसं जाणे सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं ।।२७।।

अन्वय—जावदियं आयासं अविभागी पुग्गलाणुवट्टद्धं खु तं सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं पदेसं जाणे ।

अर्थ—जितना आकाश अविभागी पुद्गल परमाणु के द्वारा अवष्टब्ध याने रोका जाता है, घेरा जाता है निश्चय से उसे सब परमाणुवों को स्थान देने में समर्थ प्रदेश जानो ।

प्रश्न १—अखण्ड आकाश में प्रदेशविभाग करना कैसे बन सकता है?

उत्तर—अखण्ड आकाश का भाव यह है कि यह एक द्रव्य है, है निःसीम विस्तृत । परन्तु यह बताओ कि एक पुरुष के दोनों हाथ के अवस्थान का क्षेत्र भिन्न है या वही एक है । एक तो है नहीं, प्रत्यक्ष ही मालूम होता । भिन्न है, तो यही तात्पर्य हुआ कि अविभागी आकाश द्रव्य में विभागकल्पना बन गई ।

प्रश्न २—आकाश के छोटे से क्षेत्र पर कितने द्रव्य रह सकते हैं?

उत्तर—अंगुल के असंख्यातवें भाग क्षेत्र पर अनन्त तो जीव और उससे अनन्तानन्त गुणे पुद्गल व असंख्यात कालद्रव्य रह जाते हैं । धर्म, अधर्म तो लोकव्यापी है ही ।

प्रश्न ३—आकाश के एक प्रदेश पर कितने द्रव्य रह सकते हैं?

उत्तर—आकाश के एक प्रदेश पर अनन्त परमाणु के पुञ्जरूप सूक्ष्मस्कन्ध व अनन्त परमाणु ठहर सकते हैं ।

प्रश्न ४—फिर पुदगल के एक परमाणु से ही प्रदेश का भाव क्यों बताया?

उत्तर—सूक्ष्मस्कन्ध परमाणुमात्र प्रदेश में अवगाह करे प्रदेश में आ जाये, इस कारण कितना भी सूक्ष्मस्कन्ध हो उससे प्रदेश का भाव निर्दोष नहीं होता । एक परमाणु एक प्रदेश से अधिक स्थान कभी घेर ही नहीं सकता । अत: अविभागी पुद्गलाणु से ही प्रदेश का भाव बताया गया ।

प्रश्न ५—पुद्गलाणु के साथ अविभागी विशेषण क्यों दिया?

उत्तर—यद्यपि पुद्गलाणु अविभागी ही याने अविभाज्य ही होता है तथापि सूक्ष्मस्कन्धों को भी अणु शब्द से कहने का व्यवहार लोक में पाया जाता है । अत: अविभागी विशेषण पुद्गलाणु के साथ यहाँ लगाया है ।

प्रश्न ६—आकाश में अनन्त प्रदेश तो हैं, किन्तु वे पूरी संख्या में हैं या ऊनी संख्या में?

उत्तर—आकाश के प्रदेश पूरी संख्या में हैं ।

प्रश्न ७—अलोकाकाश में तो पुद्गल है ही नहीं तब तो वहाँ प्रदेश न होना चाहिये?

उत्तर—लोकाकाश में भी पुद्गल परमाणु है इस कारण प्रदेश हो, ऐसी बात नहीं है । पुद्गल परमाणु से तो प्रदेश का भाव बताया है । अलोकाकाश में पुद्गल परमाणु नहीं हैं तब भी प्रदेश विभाग की कल्पना यहाँ की तरह हो जाती है ।

प्रश्न ८—अखण्डप्रदेशी को अनन्तप्रदेशी मानने में तो विरोध आता है?

उत्तर—आकाशक्षेत्र की अभेददृष्टि से जानने पर वह अखण्डप्रदेशी है और भेददृष्टि से जानने पर वह अनन्तप्रदेशी

है ।

प्रश्न ९—आकाश के किस भाग में लोकाकाश है?

उत्तर—आकाश के ठीक मध्यभाग में लोकाकाश है, सारे आकाश में यह एक ही ब्रह्मांड हैं, इसलिये आकाश के मध्य में ही ब्रह्माण्ड (लोकाकाश) सिद्ध होता है । इस लोकाकाश के सर्व ओर अनन्त प्रदेशों में आकाश ही आकाश है ।

प्रश्न १०—आकाश में अनंत प्रदेश हैं, यह कैसे जाना जाये?

उत्तर—आकाश के समस्त प्रदेशों से भी अनन्तगुणे अविभागप्रतिच्छेद वाले केवलज्ञान में यह जाना गया और दिव्यध्वनि से प्रकट हुआ । अत: अनंत प्रदेश हैं, यह नि:संदेह प्रतीति में लाना चाहिये ।

प्रश्न ११—आकाश के अनन्त प्रदेशों में कोई युक्ति भी है?

उत्तर—कल्पना करो कि किसी जगह आकाश का अन्त आ गया तो वहाँ कोई ठोस चीज आ गई कि पोल है । यदि ठोस चीज आ गई तो उसके बाद पोल ही होगी । यदि पोल है तो पोल से तो आकाश संकेतित किया जाता है । आकांक्षा का कहीं भी अंत नहीं आ सकता । इसलिये आकाश के अनन्त प्रदेश युक्तिसिद्ध भी हो जाते हैं ।

प्रश्न १२—प्रदेश का क्या आकार है?

उत्तर—वस्तुत: तो प्रदेश ही क्या समस्त आकाश निराकार है, फिर जिस दृष्टि से प्रदेश जाना गया उस दृष्टि से विचारने पर प्रदेश परमाणु के आकार वाला सिद्ध होता है । परमाणु यद्यपि निरवयव है तथापि उसमें अन्य परमाणुवों के संयोग से स्कन्धत्व हो सकता है, अत: अवयव है । परमाणु षट्कोण है । ऊपर नीचे व चारों दिशावों में संयुक्त परमाणुवों का छिद्ररहित श्लेष होता है । उस परमाणु के सदृश आकाश प्रदेश भी षट्कोण है ।

इति श्री पूज्य मुनिवर नेमिचन्द्र सैद्धान्तिदेव द्वारा विरचित द्रव्यसंग्रह की २७ गाथाओं में चार अधिकारों द्वारा षट्द्रव्य पञ्च अस्तिकाय का वर्णन करने वाले प्रथम व द्वितीय अधिकार समाप्त हुए ।

इसकी प्रश्नोत्तरी टीका प्रोफेसर श्री लक्ष्मीचन्द्र जी एम. एस-सी. जबलपुर निवासी के (जिनसे मैंने इङ्गलिश का अध्ययन किया) धार्मिक मनन के हेतु हुई ।

—मनोहर वर्णी **"सहजानन्द"**